समकालीन साहित्य, संस्कृति, कला और विचार का मासिक

उत्तर प्रदेश

नवम्बर–2024 से जनवरी–2025, वर्ष 49

₹ 15/-

आशुतोष तिवारी की कविता

गंगा यमुना सरयू की है, बहती निर्मल धारा।
दुनिया भर में सबसे सुन्दर, भारत देश हमारा।।

इसी धरा पर ऋषि मुनियों ने, वेद ऋचा हैं गाये।
हर मानव की खुशहाली को, पावन मंत्र बनाये।।
महावीर संग दिया बुद्ध ने, ज्ञान यहीं पर न्यारा।
दुनिया भर में सबसे सुंदर, भारत देश हमारा।। (1)

एकलव्य व कंर्ण हुए हैं, बलि दधीचि से दानी।
हरिश्चंद्र के सत के पथ की, अद्‌भुत बड़ी कहानी।।
भरत सिंह के दांत गिने तो, बने यही ध्रुव तारा।
दुनिया भर में सबसे सुन्दर, भारत देश हमारा।। (2)

वीर शिवा के आगे दुश्मन, सदा पराजय भाँपे।
पृथ्वीराज की पौरुषता से, गौरी से नित काँपे।।
पश्चिम में था विजय किया पर, यही सिकंदर हारा।
दुनिया भर में सबसे सुंदर, भारत देश हमारा।। (3)

परहित चिंतन में संतों का, जीवन सारा बीता।
वेदव्यास ने रचे यहीं हैं, श्रीमदभगवद् भगवद् गीता।।
तुलसी–सूर–कबीरा के पद, गाता है जग सारा।
दुनिया भर में सबसे सुंदर, भारत देश हमारा।। (4)

•

पता : ग्राम–बलीपुर परसन, पोस्ट–चमरूपुर शुक्लान, जनपद–प्रतापगढ़
मो. : 8004770400

अनुक्रम

प्रेमकथा

- तुम्हारे प्रेम के नाम ❑ विजय कुमार तिवारी / 3

लेख

- भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में जनजातीय महिलाओं का योगदान ❑ प्रो. शैलेंद्र कुमार शर्मा / 11

कहानी

- उसका फिर से मिलना... ❑ सुनीता अग्रवाल / 23
- भरोसा ❑ पूनम मनु / 29
- निःस्वार्थ सेवा ❑ डॉली शाह / 35
- पथ की पहचान ❑ सुधा शुक्ला / 37
- मुझे मत रोको ❑ सियाराम पांडेय 'शांत' / 40
- गुट्टक ❑ रेणुका अस्थाना / 43
- शालोम ब्रू ❑ अनुजीत / 45
- सरप्राइज़ ❑ प्रगति त्रिपाठी / 51

कविताएँ / ग़ज़लें

- आशुतोष तिवारी की कविता ❑ आवरण–2
- प्रदीप श्रीवास्तव की कविता ❑ आवरण–3
- सूर्यकांत शर्मा की कविता / 55
- विमलेश शर्मा की दो कविताएं / 56
- पायल सोनी की कविता / 57
- अशोक अंजुम की ग़ज़लें / 58

पुस्तक समीक्षा

- जीवन मूल्यों से साक्षात्कार कराती बाल कहानियां ❑ सुरेन्द्र अग्निहोत्री / 60
- यात्रा साहित्य का सफ़रनामा ❑ सूर्यकांत शर्मा / 61

लघु कथा

- नजरिया ❑ डॉ. सुधा मौर्य / 28

उत्तर प्रदेश

❑ वर्ष 49 ❑ अंक 69, 70, 71
❑ नवम्बर–2024 से जनवरी–2025

संरक्षक एवं मार्गदर्शक : ❑ **संजय प्रसाद**
प्रमुख सचिव, सूचना

प्रकाशक एवं स्वत्वाधिकारी : ❑ **शिशिर**
सूचना निदेशक, उत्तर प्रदेश

सम्पादकीय परामर्श : ❑ **अंशुमान राम त्रिपाठी**
अपर निदेशक, सूचना

❑ **डॉ. मधु ताम्बे**
उपनिदेशक, सूचना

❑ **डॉ. जितेन्द्र प्रताप सिंह**
सहा. निदेशक, सूचना

प्रभारी सम्पादक : ❑ **दिनेश कुमार गुप्ता**
उपसम्पादक, सूचना

सहयोग : ❑ **कुमकुम शर्मा**

भीतरी रेखांकन : **आस्था**

सम्पादकीय संपर्क : सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, पं. दीनदयाल उपाध्याय सूचना परिसर, पार्क रोड, लखनऊ
मो. : 7705800978, 9412674759
ईमेल : upmasik@gmail.com

दूरभाष : कार्यालय : ई.पी.ए.बी.एक्स 0522–2239132–33, 2236198, 2239011

पत्रिका information.up.nic.in वेबसाइट पर उपलब्ध है।

❑ **एक प्रति का मूल्य** : पंद्रह रुपये
❑ **वार्षिक सदस्यता** : एक सौ अस्सी रुपये
❑ **द्विवार्षिक सदस्यता** : तीन सौ साठ रुपये
❑ **त्रैवार्षिक सदस्यता** : पांच सौ चालीस रुपये

प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। इनसे मासिक पत्रिका 'उत्तर प्रदेश' और सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ.प्र. लखनऊ का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।
—सम्पादक

आवर्तन

''बाधाएँ आती हैं आएँ
घिरें प्रलय की घोर घटाएँ,
पावों के नीचे अंगारे,
सिर पर बरसें यदि ज्वालाएँ,
निज हाथों में हँसते–हँसते,
आग लगाकर जलना होगा।
कदम मिलाकर चलना होगा।''

कर्म पथ पर निरंतर अग्रसर, राष्ट्र धर्म का सतत् पालन करने वाले, जन–जन को जनसंघ से अनुप्राणित करने वाले जन नायक, हृदय सम्राट अटल बिहारी वाजपेई, पूर्व प्रधानमंत्री का जन्म दिवस भी साल के आखिरी माह दिसंबर में ही आता है। यूएनओ में राजभाषा हिंदी का परचम लहराने वाले इस पुरोधा को अगला वर्ष जन्मशती वर्ष के रूप में मना ले तो यह सुखद आश्चर्य और भारत माता के इस सपूत को सच्ची श्रद्धांजलि होगी। उत्तर प्रदेश ने अनेक प्रधानमंत्री इस देश को दिये हैं। इनमें स्वर्गीय श्री अटल बिहारी वाजपेई जी प्रदेश की राजधानी लखनऊ से सांसद भी रहे हैं और इस राजनीति के भीष्म पितामह भी। उन्होंने समूचे राष्ट्र को राजधर्म के अनुसार अपने प्रधानमंत्रित्व काल में सुशासन से संचालित भी किया। उनके इसी उल्लेखनीय योगदान को रेखांकित करते हुए उनके जन्म दिवस पच्चीस दिसंबर को क्रिसमस उत्सव के साथ सुशासन दिवस के रूप में भी मनाया जाता है।

देखा जाए तो वर्ष 2024 का यह अंतिम माह कुछ उल्लेखनीय राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर के उत्सव और अवसर विशेष के लिए भी खास है उदाहरण के तौर पर विश्व एड्स दिवस राष्ट्रीय प्रदूषण नियंत्रण दिवस, विश्व कंप्यूटर साक्षरता दिवस, विश्व विकलांग दिवस, 5 दिसंबर, 2024 अंतर्राष्ट्रीय स्वयंसेवक दिवस, बी.आर. अंबेडकर की पुण्यतिथि, भ्रष्टाचार, मानव अधिकार दिवस, कारगिल विजय दिवस, प्रसिद्ध गणितज्ञ श्री रामानुजम के जन्म दिन को राष्ट्रीय गणित दिवस और 26 दिसंबर को वीर बाल दिवस के रूप में मनाया जाना है। इसमें सिख धर्म के महान गुरु गोविंद सिंह जी ने देश और धर्म की रक्षा हेतु अपने चारों पुत्रों को बलिदान कर दिया था। केंद्र सरकार ने इस कुर्बानी को देश के जन–जन के हृदय में प्रेरणा रूप में अनुप्राणित करने के उद्देश्य से इसे वीर बालक दिवस के रूप में मनाने का निर्णय लिया और अब 26 दिसंबर एक पावन अवसर के रूप में जाना जाता है।

उत्तर प्रदेश के सुप्रसिद्ध साहित्यिक विभूति स्वर्गीय श्रीलाल शुक्ल का जन्म दिवस भी इसी साल के अंत में आता है और अगला वर्ष जन्मशती वर्ष के रूप में संभवतः मनाया जायेगा। इस प्रकार यह दिसंबर मास और संपूर्ण वर्ष 2025 हमारे प्रदेश के दो सपूतों यथा स्वर्गीय अटल बिहारी वाजपेई जी और श्रीलाल शुक्ल जी के योगदान और परिचर्चा से गुलजार रहेगा।

यूं भी यह युवा होता भारत यानी युवाओं का देश भारत है जो इंडिया का चोला छोड़ कर अपनी अस्मिता को पहचान आत्मनिर्भर भारत को अंगीकार कर रहा है। विश्व की पांचवीं बड़ी अर्थव्यवस्था अब अपने अगले पड़ाव विश्व की तीसरी अर्थव्यवस्था बनने को सद्य है। ऐसे में साहित्य संस्कृति भी इसे प्रभावी रूप से उकेरें और हमारे बालकों, किशोरों, युवाओं, महिलाओं और प्रदेश–देशवासियों को समीचीन साहित्य और संदर्भों से परिचित कराएं यही हमारी इस पत्रिका के अंक में चयनित सामग्री का उद्देश्य है और ध्येय भी।

चलते–चलते, अपने पाठकों को हम अपनी ओर से आने वाले वर्ष सन् 2025 की हार्दिक शुभकामनाएं। हमारा यह अंक आपको कैसा लगा, यह जानने की उत्कंठा हमें रहेगी।

● दिनेश कुमार गुप्ता

तुम्हारे प्रेम के नाम

❑ विजय कुमार तिवारी

तुमने कहा था, 'मैं बहुत प्रेम करती हूँ, परन्तु मेरा प्यार वो वाला प्यार नहीं है।' मेरे लिए तुम्हारा इतना ही कहना किसी संजीवनी से कम नहीं है। तुम्हें शायद पता नहीं, आजकल मैं किसी अजनबी दुनिया में चला आया हूँ और उम्र के तकाज़े के अनुसार जीने की कोशिश कर रहा हूँ। तुमने भी तो, बार–बार आगाह किया था कि मुझे कोई निश्चित ज़िन्दगी जीना शुरु कर देना चाहिए। यह ज़िन्दगी निश्चित और स्थायी है कि नहीं, यह तो नहीं पता परन्तु मेरी कोशिश है कि सब कुछ ठीक–ठाक रहे।

पत्र लिखने का मूल कारण है, प्रेम करने वालों के बीच संवाद ना हो तो दोनों की ज़िन्दगी मृतप्राय सी बोझिल हो जाती है। उलाहना और आरोप–प्रत्यारोप की शैली को तुमने शुरु में ही नकार दिया था, इसलिए वैसा तो नहीं कह सकता परन्तु इतनी शिकायत का हक तो बनता ही है कि तुमसे पूछूँ, ''इतने लम्बे समय से, शायद पांच–छह सालों से, तुमने मेरी खोज़–ख़बर नहीं ली है। यह मत समझ लेना कि मैं ऊबकर बता रहा हूँ। मेरा धैर्य अभी भी बना हुआ है और मैं जन्म–जन्म तक प्रतीक्षा कर सकता हूँ।'' दूसरा कारण यह है कि आज मुझे स्पष्ट महसूस हुआ कि तुम मेरे कमरे में आयी हो, मुझे दयालु भाव से देख रही हो और कहना चाहती हो कि प्यार तो प्यार ही होता है, ये वाला या वो वाला नहीं होता। लग रहा है कि तुम दुनिया के थपेड़ों को सह नहीं पा रही हो और शायद कमजोर पड़ती जा रही हो। यह तो तुम्हारा ही निर्णय था, मैं तो दूर–दूर तक इसका ज़िम्मेदार नहीं हूँ।

बहुत भाग–दौड़ के बाद, सच कह रहा हूँ, मैंने तुम्हारी सलाह पर ग़ौर किया और किसी स्थायी, शान्त ज़िन्दगी की तलाश ने मुझे यहाँ ला पटका है। मैं वहाँ भी खुश था जहाँ रहते हुए तुमने मुझे खोज निकाला था। प्रेम जैसी कोई भावना, कम से कम, मुझे तो नहीं थी और होती भी कैसे? यह किसी भी तरह मर्यादित नहीं था। हाँ, तुम्हारे सौन्दर्य की सराहना किये बिना मैं नहीं रह सका। तुमने अपने वाल पर अनगिनत तस्वीरें डाल रखी थीं। मैं कोई पारखी नहीं था, बस जो लगा वह बता दिया। तुमने जो महसूस किया, वह तुम जानो। मैंने तब तक अपनी कोई तस्वीर नहीं डाली थी। तुम्हारे आग्रह पर मैंने अपनी तस्वीर डाली। याद करो, तुम बहुत हंसी थी मेरी तस्वीर देखकर। तुमने कहा था, ''मन कर रहा है कि अपना सिर फोड़ लूँ। अरे, कोमल भावनायें जागीं भी तो ऐसे व्यक्ति के लिए, जो उम्र में बहुत बड़ा है।'' मैं भी हंस पड़ा था और

तुम्हारी सच्चाई और निःश्छलता पर मुग्ध हुए बिना नहीं रह सका। इसके बाद तुमने ही सारी शर्तें रखीं, सारे तर्क दिये और पटरियाँ बनायी जिस पर प्रेम की गाड़ी चलने लगी। तुम्हें आश्चर्य होता था कि कैसे बहुत आसानी से तुम्हारी सारी बातें मान लेता हूँ। वह इसलिए कि मैं तुम्हें खोना नहीं चाहता जबकि तुम्हें पाने की सम्भावना न तब थी और न आज है। तुमने कितनी निर्दयता से शर्त लगा रखी थी कि कभी पाने या मिलने की बात नहीं करूँगा। मैंने तुम्हारी भावनाओं को हमेशा सर्वोच्च स्थान दिया और कभी भी कोई शर्त नहीं तोड़ी। तुमने इसके लिए मेरी बार–बार सराहना भी की है। मैं यह भी कह सकता हूँ कि तुम खुद अपनी ही शर्तों में बंधी रह गयी।

कभी–कभी शंका होती थी कि तुम कोई मायावी तो नहीं हो जो मेरा धर्म भ्रष्ट करना चाहती हो या मेरी भावनाओं से खेलकर मुझे पीड़ित–प्रताड़ित करके सुखी होना चाहती हो। ऐसा प्रेम तो होता ही नहीं। यदि होता है तो किसी परिणति तक पहुँचना चाहिए। तुम्हारे ऐसे प्रेम का रहस्य भगवान ही जाने। मैंने तो सदैव तुम्हें सत्य समझा और तुम्हारी हर भावनाओं की पूजा की। तुम्हें खुश पाकर मैं खुश हो लेता था और तुम्हें सन्तुष्ट देखकर संतोष कर लेता था। तुमने इसे नैसर्गिक और पवित्र प्रेम कहा था जिसमें किसी तरह की सांसारिकता न हो, कोई पाप न हो।

'मैं बहुत प्रेम करती हूँ, परन्तु मेरा प्यार वो वाला प्यार नहीं है।' मेरे लिए तुम्हारा इतना ही कहना किसी संजीवनी से कम नहीं है। तुम्हें शायद पता नहीं, आजकल मैं किसी अजनबी दुनिया में चला आया हूँ और उम्र के तकाज़े के अनुसार ज़ीने की कोशिश कर रहा हूँ। तुमने भी तो, बार–बार आगाह किया था कि मुझे कोई निश्चित ज़िन्दगी जीना शुरु कर देना चाहिए। यह ज़िन्दगी निश्चित और स्थायी है कि नहीं, यह तो नहीं पता परन्तु मेरी कोशिश है कि सब कुछ ठीक–ठाक रहे।

कभी–कभी सोचता था कि तुम प्रेमजनित विह्वलता की चर्चा करोगी और मुझे आमन्त्रित करोगी परन्तु ऐसा कभी नहीं हुआ। शायद तुमने अपनी प्रेम–भावनाओं को किसी गह्वर गुफा में कैद कर दिया था या तुम्हारे भीतर किसी मजबूत आवरण की परत के नीचे दबा पड़ा था। मैं बहुत निराश रहता था उन दिनों और तुम कोई अबूझ पहेली सी लगती थी। फिर न जाने कैसे तुम मेरी मानसिक उद्विग्नता समझ लेती थी और खिलखिलाकर हंस पड़ती थी। मेरा मनुहार करती और मुझे प्रसन्न करने के लिए सारे तामझाम करती। मैं समझ नहीं पाता कि तुम्हारा कौन सा पक्ष सही है।

सच यह भी है कि मुझे भी सुख और आनन्द मिलता था। मैं तो इतने से ही सन्तुष्ट हो लेता था या मान लेता था, शायद यही सच्चा प्रेम है। तुम्हारी उस बात को सही मानकर कि प्रेम एक तपस्या है, मैंने तपस्या की है। इस तप में मुझे सुख मिलता था क्योंकि तुम्हीं ने कहा था कि प्रेम सुख देता है।

भगवान की प्राप्ति का जो आधार मुझे बताया गया वही आधार तुमने प्रेम के लिए भी बताया था। तुमने कहा था कि प्रेम मिल गया तो समझो कि परमात्मा मिल गये। मुझे कहने में कोई संशय नहीं है कि इस क्रम में मैंने बार–बार परमात्मा की अनुभूति की है और तुम्हें प्रेम की देवी के रुप में पाया है।

मुझे अन्य लोगों की प्रेम कहानियों में वह भाव नहीं दिखता। उनमें तकरार, उलाहनायें और एक–दूसरे को पीड़ित करने के भाव छिपे दिखते हैं। पाने और छोड़ने की बेकरारी रहती है। एक–दूसरे में दोष ख़ोजते रहने की प्रवृत्ति होती है और जीत–हार का खेल चलता रहता है। मैंने कभी तुम्हें जीतना नहीं चाहा और तुमने मुझे कभी हारने नहीं दिया। मेरा दिल कभी उदास हुआ तो आँसू तुम्हारी आँखों से निकले। शायद यही हालत मेरी भी रही। मुझे तुम्हारी उन दिनों की पीड़ा की पूरी अनुभूति है जब दुर्घटना हुई थी और मैं महीनों बिस्तर में पड़ा था। तुम अपनी शर्तों की पाबंद नहीं होती तो शायद उड़कर मेरे पास आ जाती। तुमने कहा भी था कि प्रेम में देने की आवश्यकता होती है। प्रेम सेवा–समर्पण की मांग करता है। मुझे आज भी पूर्ण विश्वास है कि प्रेम की कोई ऐसी कसौटी नहीं है जिस पर तुम खरी न उतरो। यही हमारी शेष जिन्दगी का सम्बल है और इसी तरह हमारा प्रेम अमर हो जायेगा। मैं तुम्हें धन्यवाद देता हूँ कि तुमने मुझे प्रेम की अमर रीति सिखायी है।

दुनिया तो वही है जो सबकी होती है परन्तु मेरे लिए जैसे बिल्कुल अजनबी हो चुकी है। जो जानी–पहचानी

दुनिया थी उसे मैं बहुत पीछे छोड़ आया हूँ और यह नयी जगह, नयी दुनिया जैसे मुझे आत्मसात करने को तैयार ही नहीं है। इस दृष्टि से समूची नारी जाति के प्रति मेरा मन पूरी श्रद्धा से झुक जाता है। जहाँ जन्म लेती है, जिन हवाओं में सांसें लेकर जवानी की दहलीज तक पहुँचती है, माता–पिता, भाई–बहन, दोस्त–मित्र सबको छोड़कर, नयी दुनिया बसा लेती है। यह हुनर हर लड़की बिना बताये जानती है और समय आने पर बखूबी निभा लेती है। तुम्हारी इस बात से पूरी तरह सहमत हूँ कि लड़की को सही संरक्षण मिले तो वह सब का सहारा बनती है। तुम्हारी मृदुल मुस्कान आज भी याद है, जब तुमने कहा था, ''पुरुष में यह गुण नहीं होता या बहुत कम होता है। वह तो अपने पुरुषत्व के दम्भ में रहता है। नारी उसका भी सहारा बनती है और उसके दम्भ का भी।''

अक्सर नारी अपने पुत्र को हर तरह से मजबूत, जुझारू और संघर्षशील बनाने में अपनी पूरी चेतना, प्राणशक्ति और अपना युवापन सब झोंक देती है। सन्तान के लिए अपनी युवा भावनाओं, सुख–शान्ति सब समर्पित कर देती है। अपनी चिन्ता शायद कोई नारी नहीं करती और इसका दावा भी नहीं करती।

तुम्हें मेरे बीच के भटकन भरे दिनों के बारे में पता नहीं है। जीवन की भयानक अनुभूतियों के दौर से गुजरा हूँ। कोई बड़ी बीमारी तो नहीं थी, फिर भी लोगों ने कहा, ''कुछ समय किसी ग्रामीण अंचल में जाकर रहिये। पेड़ों, बाग–बगीचों, लहलहाते खेतों और ताल–पोखरों के बीच बसा गाँव अद्‌भुत नैसर्गिक सुख–शान्ति प्रदान करते हैं। बड़े–बड़े चरागाहों में घास चरती गाय–भैंसें, बकरियाँ, बैल, घोड़े और उनके साथ जीवन का सुख भोगता आदमी, मजबूत, सहनशील, चेतन और प्रकृति के साथ रचा–बसा होता है। ईश्वरीय भावों से भरा गाँव का आदमी प्रेम, करुणा, दया, सहयोग जैसे उदात्त गुणों से भरा होता है।

मैंने अपना ही गाँव चुना जहाँ मेरा जन्म हुआ है और मेरा बचपन बीता है। बाद में भी अक्सर गर्मियों में मैं वहाँ आया करता था। सोचा कि लम्बा प्रवास करुंगा और यहाँ की सारी ताज़ी हवा अपने फेफड़ों में भर लिया करुंगा। घर भी पहले जैसा नहीं है, जिस कमरे में रहने को मिला है वह बहुत हवादार और खुला–खुला है। पहले ही मेरे आने की सूचना पहुँच चुकी थी और लोगों ने कहा, ''हम सभी बहुत बेसब्री से प्रतीक्षा कर रहे हैं।'' गाँव के लोगों ने हमदर्दी दिखायी। मैं अभिभूत हुआ।

घर के सामने कभी विशाल बरगद का पेड़ हुआ करता था। उसकी छाया तले गाँव भर के युवा और वृद्ध पूरी गर्मी काट देते थे। अब वहाँ चारों तरफ घास–पात, जंगल जैसा उग आया है। बरगद से कुछ दूर जहाँ खेत शुरू होते हैं वहाँ नीम का मोटा, बड़ा पेड़ और कनेर था। अब न बरगद है, न नीम का पेड़ और न कनेर। इतना ही नहीं, गाँव के आसपास दूर–दूर तक आम, महुआ, नीम, जामुन, पीपल के बाग–बगीचे और चारों तरफ हरियाली युक्त चरागाह थे। आज वैसा कुछ भी नहीं है। ताल–पोखर भी सूख गये हैं।

तुम्हें मन की पीड़ा लिख रहा हूँ। मेरी सारी कल्पनायें धूमिल हुई हैं और सारा उत्साह ठंडा हो चुका है। लगभग चालीस वर्षों के बाद लौटा हूँ और मेरा गाँव विरान दिख रहा है। पहले मिट्टी के खपरैल मकान हुआ करते थे और गरीबों की घास–फूस की झोपड़ियाँ। अब लोगों ने पक्के मकान बना लिये हैं। कुंओं की जगह सबके घरों में हैंडपंप हैं, गलियों में खड़ंजा और इस टोले से उस टोले तक पक्की सड़क। बिजली के खम्भों पर रात भर बल्ब जलते हैं और घरों में भी। मैंने पुस्तकें भेजी थीं जिसे आलमारी में सहेजकर रखा गया है। मेरी दूसरी पीड़ा है कि साहित्य और धर्म की पुस्तकों से भरी आलमारी कोई खोलने वाला नहीं है। तुम कल्पना करो कि बिना पढ़े ज्ञान कहाँ से मिलेगा? मैंने अब तक के जीवन में बहुत पुस्तकें पढ़ी हैं और उनका संग्रह किया है। दो–चार दिनों में ही मेरी समझ में आ गया कि यहाँ के लोग अपने तरह से ज्ञानी हैं और जितना सीधा–सरल समझ रहा हूँ, वैसी स्थिति नहीं है। विद्वानों ने कहा है कि या तो पूर्ण ज्ञानी सुखी रहता है या जो बिल्कुल अज्ञानी है। ये लोग अपने तरह के ज्ञानी हैं और खूब ठसक की ज़िन्दगी जीते हैं।

यह मत समझना कि मैंने बहुत कुछ भुला दिया है और किसी अलिप्त सन्यासी की तरह रह रहा हूँ। मैंने सुखी होने का अपना तरीका खोज निकाला है। दो–तीन दिनों तक बड़ी असमंजस की स्थिति रही। अचानक नीचे से कुछ महिलाओं की आवाज़ें सुनायी पड़ी। निश्चित ही उनका जमावड़ा हुआ है और उनकी हंसी में अद्‌भुत निश्चिन्तता है।

संयोग से थोड़ी दूरी पर पड़ोसी की दालान में पुरुषों की महफिल सजी है। मैं भी नीचे उतर आया और दूसरे टोले की ओर बढ़ चला। बचपन के दिनों के कुछ ही लोग जीवित हैं, अधिकांश भगवान को प्यारे हो गये हैं। जो जीवित हैं उनकी हड्डियाँ निकल आयी हैं और सबके चेहरों पर दुश्चिन्तायें पसरी हुई हैं। इनकी सोच ने मुझे बुरी तरह हिला डाला है। दुनिया के सभी दुख इन गाँव वालों को ही हैं। सारी रोग–व्याधियाँ इन्हें ही होती हैं। बाहर रहने वाले ऐशो–आराम की ज़िन्दगी जीते है, उन्हें कोई दुख नहीं होता, कोई रोग–व्याधि नहीं होती। इनकी सोच यह भी है कि इन्होंने ही त्याग–तपस्या करके उन्हें इस योग्य बनाया है कि बाहर जाकर नौकरी पा सकें। बाहर जाकर नौकरी–चाकरी करने वाले स्वजनों के प्रति विचित्र विरोध के भाव हैं। इनका कहना है कि हम आयेंगे तो हमें क्या दोगे और तुम गाँव आओगे तो क्या–क्या लाओगे?

जब यह सूत्र मेरी पकड़ में आया तो खूब हंसा और मैंने स्वयं को मुक्त कर लिया। इनकी बातें सुनता हूँ, हाँ में हाँ मिलाता हूँ, इनके स्तर पर उतर आता हूँ, इनकी हंसी–मजाक में शामिल होता हूँ, इनकी फूहड़ता भरी वाचालता का रस लेता हूँ और इनकी चुहलबाजियों की गन्दगी देखता हूँ। शायद इनका मेरे प्रति विश्वास बना है और बिना संकोच किये रहस्योद्घाटन करते रहते हैं। लड़कियाँ, महिलायें ज़्यादा चालाक और वाचाल हैं तथा एक–दूसरे की गोपनीयता उजागर करती रहती हैं। पूरी तरह समझ गया हूँ कि यह दुनिया परमात्मा की है और वही अपनी दुनिया चला रहा है। अपना खून जलाने की आवश्यकता नहीं है।

तुमने अनेकों बार कुरेदा है मुझे, ''कैसे मैं अपने को बचाता रहा और कैसे इस मतलबी दुनिया की शातिर चालों को समझ पाया।'' तुमसे खुलकर कहना चाहता हूँ, सच बयान करता हूँ कि यह कोई मुश्किल काम नहीं है। हर व्यक्ति को थोड़ा सजग रहना चाहिए। थोड़ी सावधानी, थोड़ा धैर्य हो तो कोई भी सामने वाले की मंशा समझ सकता है। हम प्रतिक्रिया देने में देर नहीं करते और उलझ जाते हैं। मजेदार बात यह है कि कोई भी पहले तीर–तलवार लेकर नहीं निकलता, वह हमारे करीब बहुत संकोच–भाव से आता है, पास बैठता है, मधुर और अच्छी बातें करता है और धीरे–धीरे अपनी मंशा जाहिर करता है। हमें भी वैसा ही करना चाहिए। उन्हें बैठायें, चाय पिलायें, उनके जीवन की बातें करें, कुछ अपनी सुनायें और उनकी बातों को पूरे ध्यान से सुने। सावधानी यही रहे कि मुश्किल को छोड़िये, सहज–साधारण मांग हो तो भी तुरन्त उतावलापन ना दिखायें, निर्णय लेने के लिए कुछ समय लें। थोड़ा सोच–विचार कर लें और सम्भव हो तो किसी से सलाह भी ले लें। इतना ही मैंने जीवन भर किया है। यदि कुछ उल्टा भी हुआ है तो बड़ी हानियाँ नहीं हुई हैं।

एक बात और कहना चाहता हूँ। प्रेम और वैर के भाव पहले भी थे। आज जैसी स्थिति नहीं थी। आज का प्रेम मर्यादाहीन हो गया है। तब रिश्ते बड़े जीवन्त होते थे और सम्बन्धों में लोक–लाज और मर्यादा का पूरा निर्वाह होता था। बाग–बगीचों में फलों के मौसम में और फसल तैयार होने पर खेत–खलिहानों में समवयस्क जवान लड़के–लड़कियाँ बेर–कुबेर बेधड़क, बिना किसी भय के जाते थे और काम करते थे। मिलना–जुलना होता था, सहयोग–सहकार होता था परन्तु लड़के भाई होते थे और लड़कियाँ बहनें। इसके अलावा दूसरे किसी रिश्ते की कोई सोच नहीं थी। मर्यादित प्रेम की भावना से पूरा गाँव बँधा रहता था।

कभी–कभी मर्यादायें टूटती भी थीं और बड़ी वीभत्स स्थिति पैदा होती थी। तब मैं समझदार नहीं था या उन सम्बन्धों की गहराई नहीं समझ पाता था। एक दिन गाँव में पुलिस आ गयी और बरगद के पेड़ के नीचे उनका दरबार लगा। देखने में सीधे–सादे लड़के को पकड़ा गया जिससे मेरी भी दोस्ती थी। हालांकि वह मुझसे उम्र में बड़ा था परन्तु हम साथ ही, एक ही कक्षा में पढ़ते थे। मेरी समझ में नहीं आया कि उसने कौन सा अपराध किया है। गेहूँ के फसल की कटाई हो रही थी। बहुत से मजदूर लगे थे। उसने किसी जवान मजदूरनी के साथ कोई शरारत की। मामला रफा–दफा किया गया। मेरी समझ में नहीं आया कि उसने ऐसा क्या किया कि लोग हंस भी रहे थे और उसे दण्ड भी देना चाहते थे।

ऐसे ही एक सुबह गाँव की एक बहन की मर्यादा टूटने से बच गयी। आम पकने लगे थे और लोग अपने–अपने बगीचों में दिन भर जमे रहते थे। समस्या रात की थी। कुछ

हिम्मती लोग रात में ही बहुतों के पेड़ों के आम चुन ले जाते थे। लड़के–लड़कियाँ भोर–भोर में, कभी–कभी रात अंधेरे अपने बगीचों में पहुँच जाते थे और आमों की रखवाली करते। ऐसे ही किसी रात मैं भी अपने बगीचे में पहुँच गया। रास्ते में कोई नहीं मिला। मुझे खुशी हुई कि आज बहुत पहले पहुँचा हूँ। मैंने गमछा बिछाया और पसर गया। आँखों पर नींद की खुमारी छाने लगी थी।

तभी अचानक बगल वाले बगीचे के मालिक की जवान लड़की भागती हुई आयी। वह डरी हुई थी, हांफ रही थी और अपने बगीचे की ओर दिखाकर बोली, ''कोई मुझे पकड़ना चाहता है।'' मेरी नींद उड़ गयी, मैंने अपना डंडा सम्हाला, उठ खड़ा हुआ, ''कौन है, किधर है?'' हम उसके बगीचे में गये, चारों तरफ ध्यान से देखा, खोजा, कोई नहीं मिला। वह भी मेरे साथ लौट आयी। अभी भी डरी हुई थी। थोड़ी सामान्य हुई, बोली, ''पहचान नहीं पायी। उसने मुझे पकड़ ही लिया था अपनी बाँहों में।'' वह शरमा गयी। उत्तर–पूर्व के कोने में उगते सूर्य की लाली से भोर का उजास फैलने में अभी देर थी। मैंने उस बहन को देखा, उसका सम्पूर्ण चेहरा क्रोध एवम् भय से रक्ताभ हो उठा था। मैंने कहा, ''अभी भोर होने में देर है, थोड़ा आराम कर लो। निःसंकोच वह लेट गयी।

दुनिया तो वही है जो सबकी होती है परन्तु मेरे लिए जैसे बिल्कुल अजनबी हो चुकी है। जो जानी–पहचानी दुनिया थी उसे मैं बहुत पीछे छोड़ आया हूँ और यह नयी जगह, नयी दुनिया जैसे मुझे आत्मसात करने को तैयार ही नहीं है। इस दृष्टि से समूची नारी जाति के प्रति मेरा मन पूरी श्रद्धा से झुक जाता है।

अक्सर तुम पूछा करती थी। अब तुम्हें, तुम्हारे प्रश्नों के उत्तर मिल गये होंगे। आज मैं ऐसी परिस्थितियों को याद करता हूँ तो खुशी होती है। कम से कम ऐसा तो था कि कोई बहन भरोसा कर सकती थी। उन दिनों में मेरी मनोदशा कैसी रहती थी, बताऊँ तो तुम विश्वास नहीं करोगी। मैंने कहीं पढ़ा था कि अबोध बच्चा बहुत दिनों तक अपने पूर्व–जन्म की स्मृतियों में खोया रहता है। निश्चित तौर पर तो नहीं कह सकता परन्तु इतना तो सत्य है कि मेरी रुझान साधु–सन्तों के प्रति आदर–भाव की ओर था। इतनी कोशिश जरूर रहती थी कि कोई मुझे बुरा न समझे और कभी भी कोई मेरी शिकायत लेकर पिता के पास न जाये। एक अच्छा इंसान बने रहने और दिखने की सजगता ने मुझे बहुत सी शरारतों से बचाया है। कोई मेरे गुणों की चर्चा करता तो बहुत अच्छा लगता था। इसका सबसे महत्वपूर्ण लाभ यह हुआ कि किसी ने मुझे तिरस्कार की दृष्टि से नहीं देखा, सबने स्नेह और प्रेम किया।

तुम पूछा करती थी ना कि असली सौन्दर्य कहाँ होता है? शायद मैं भी उस असली सौन्दर्य से अपरिचित रह गया होता यदि जीवन के इस मोड़ पर गाँव नहीं आया होता। नित्य ही भोर में जागकर झुरमुटों के पीछे से सूर्य को उगते देखना और सन्ध्या में पश्चिमी छोर पर डूबते देखना विचित्र अनुभूतियों से भर देता है। मैंने पहली बार महसूस किया कि हम भी उसी तरह विराट हैं जैसे यह आसमान, धरती और सारा ब्रह्माण्ड। प्रकृति की एक–लय गतिशीलता, जीव, वनस्पति, धरती, आकाश का एक–दूसरे से गहरे तौर पर जुड़ा होना और सबके भीतर की आत्मा का उस परम चेतना से अटूट सम्बन्ध मेरे हृदय को जागृत करता रहता है। पुष्ट और बड़े–बड़े थनों वाली गाय–भैंसे, खेतों की हरियाली, चिड़ियों का सुबह–शाम मधुर गायन और इतराती–इठलाती बहुओं की गोद में खेलते, मचलते नन्हें–नन्हें बच्चे, यदि किसी को इनमें सौन्दर्य नहीं दिखता तो मैं मानता हूँ कि उनमें सौन्दर्य–चेतना विकसित ही नहीं हुई है। ऐसे लोग परमात्मा द्वारा प्रदत्त नैसर्गिक सौन्दर्य को छोड़कर आज के बनावटी संसार में रस खोजते हैं। सच्चे प्रेम की तिरछी चितवन छोड़कर भोड़े श्रृंगार में सुख–शान्ति की तलाश करते हैं।

तुमने कई बार मुझसे पूछा है और शायद हर लड़की सशंकित रहती ही है कि जिससे वह प्यार की उम्मीदें पाल रही है, कहीं वह कोई खेल तो नहीं खेल रहा या उसकी जिन्दगी में पहले से ही कोई बसन्ती बयार तो नहीं बह रही। वैसे यह प्रश्न ही गलत है परन्तु इसके पीछे की चिन्ता वाजिब है। मैं तुम्हें कुछ सुनाना चाहता हूँ। निर्णय तुम्हारे ऊपर ही छोड़ता हूँ, तुम्हीं तय कर लेना कि उन हालातों को क्या समझा जाय। मौसम में थोड़ी ठंडक है। हवा शीतल है और मन भावुक हो रहा है। सबको एक दिन यह दुनिया

छोड़कर जाना है। यह जाना ऐसा नहीं होता कि आप थैला सम्हाले और उठकर चल दिये। इस तरह चले जाने में बड़ी मार्मिक स्थिति पैदा होती है। पता नहीं उसने कोई तैयारी की है या नहीं? जाना भी चाहता है या नहीं? जिन लोगों को छोड़कर जा रहा है उनके लिए उसका मन निश्चिन्त है या नहीं? वे लोग उसे जाने देना चाहते हैं या नहीं? सुना है–मृत्यु के देवदूत आते हैं तो अधिकांश लोग विह्वल हो उठते हैं। यह बता पाना मुश्किल और जटिल है कि उस समय उनकी मनःस्थिति क्या होती है या वे क्या चाहते है।

अभी कोरोना की महामारी पूरी दुनिया में फैली है। लोग मर रहे हैं। ऐसी ही एक तस्वीर मेरे फेसबुक पर दिखी। कोई तीस–बत्तीस साल की खूबसूरत डाक्टर है, बड़ी–बड़ी आँखें, मुस्कराता चेहरा और अद्‌भुत व्यक्तित्व। चल बसी। किसी ने नहीं सोचा होगा और उसके सपने? बिल्कुल तुम्हारी तरह उसकी आँखें हैं और मुस्कान भी। तुम्हारे न होने की कल्पना से ही मैं विचलित हो उठता हूँ जबकि सच्चाई पता है कि कभी हम मिलने वाले नहीं। उसके बिना उन लोगों की स्थिति कैसी हो गयी होगी जिनकी जिन्दगी की आस रही होगी। यदि बच्चे हुए तो उनका क्या होगा?

अक्सर नारी अपने पुत्र को हर तरह से मजबूत, जुझारु और संघर्षशील बनाने में अपनी पूरी चेतना, प्राणशक्ति और अपना युवापन सब झोंक देती है। सन्तान के लिए अपनी युवा भावनाओं, सुख–शान्ति सब समर्पित कर देती है। अपनी चिन्ता शायद कोई नारी नहीं करती और इसका दावा भी नहीं करती।

मेरे पास काले रंग का कुत्ता था। बहुत सालों से था। जब मेरा तबादला हुआ तो उसकी मां मिली मुझे। पूरा कैम्पस उसी का था। हर वर्ष उसके बच्चे होते थे। उन्हीं में से एक था। कुछ सालों बाद बीमार पड़ा और स्थिति मरणासन्न हो गयी। उसने अन्न–जल लेना बन्द कर दिया और निरीह सा देखता रहता। उसकी पनीली आँखें मुझे द्रवित करती, मेरी बेचैनी बढ़ा देती। रात में वह मेरे स्वप्न में आया। किसी आदमी की तरह बाँहें फैलाकर मुझसे लिपट गया मानो कह रहा हो कि मुझे बचा लो, मैं मरना नहीं चाहता। मैंने चीत्कार किया और रो पड़ा। मुझे रोता देख पूरा घर जाग गया। बाहर जाकर देखा। बहुत शान्त था मानो उसने जाने की तैयारी कर ली हो। उसकी पलकें उन्मीलित हुई और बन्द हो गयी। अगली सुबह वह नहीं था। उसमें उठकर खड़ा होने की शक्ति नहीं थी। कहाँ गया? पूरे कैम्पस में खोजा, आसपास खोजा, कहीं नहीं था, न जीवित, न मृत। मेरे जीवन का यह रहस्य है और मैं समझ पाया कि मृत्यु के पहले की दशा कैसी होती होगी।

मैं जिस कालेज में पढ़ता था, वहाँ पीछे देवी जी का मन्दिर है। चाय–समोसे के लिए हम लोग उधर का चक्कर लगाया करते थे। ''मैं आपसे कुछ मदद चाहती हूँ,'' किसी दिन इण्टर में साथ पढ़ने वाली सहपाठिनी ने मुझसे उसी मन्दिर के सामने कहा, ''मुझे आपकी नोट्स चाहिए।''

यह मेरे लिए आश्चर्य की बात थी। हम लड़कों के बीच वह एकमात्र लड़की थी, साँवली और लम्बी सी। उससे सहानुभूति, हमदर्दी और किंचित प्रेम भाव रखने वाले लड़कों की कमी नहीं थी। नोट्स क्या–मांगे तो अपना सब कुछ दे दें। गुलमोहर के चटकदार लाल फूल खिले हुए हैं। उसने धीमी आवाज में कहा, ''सर ने आप ही से लेने को कहा है।''

मैंने अपना प्लास्टिक का थैला खोला, नोट्स निकाले और चुपचाप उसकी ओर बढ़ा दिया। उसकी झुकी पलकें ऊपर उठीं, स्मित मुस्कान उभरी मानो धन्यवाद के भाव से देख रही हो। पहली बार मैंने गौर किया कि उसकी आँखें गहरी और सुन्दर हैं।

कुछ दिनों बाद उसने नोटबुक लौटा दी। उसमें एक छोटा सा लिफाफा था। दिल धड़का और हाथ कांपने लगे। मेरी मनःस्थिति तब सामान्य हुई जब देखा कि पत्र उसी के नाम है। भेजने वाले ने अपना नाम नहीं लिखा था। मैंने कालिदास रचित प्रसिद्ध काव्य, 'मेघदूत' का हिन्दी अनुवाद पढ़ा था और प्रेम–पत्र की उत्तम साहित्यिक संकल्पना मेरे मन में थी। इस पत्र ने मेरे भीतर वितृष्णा पैदा की।

उसने अगले ही दिन अपना पत्र मांग लिया और हंस पड़ी। मैंने पूछा, 'किसने दिया है?' उसके चेहरे पर शरारत उभर आयी, बोली, 'आप को इससे क्या मतलब–कोई दे?' किंचित रुककर उसने थोड़ी मायूसी, थोड़े उत्साह से देखा और निमन्त्रण देती हुई बोल पड़ी, 'आप तो दोगे नहीं।'

वाराणसी स्टेशन पर हम चेन्नई वाली ट्रेन की प्रतीक्षा में थे। हम यानी दस छात्र, विभागाध्यक्ष और आंटी। मुझे चाय पीने की इच्छा हुई। दस–ग्यारह साल के लड़के ने मेरा

हाथ पकड़ा, ''दीदी आपको बुला रही है,'' उसने थोड़ी दूर सामान के साथ बैठी हुई लड़की की ओर संकेत किया।

''क्या बात है?'' मैंने पास जाकर पूछा। उसने कुछ दूरी पर खड़े लड़कों की ओर भयभीत होकर देखा। स्थिति समझ मे आ गयी। ''आप हमारे साथ आ जाओ, हमारी आंटी हैं,'' मैंने कहा। वह खड़ी हुई। सामान उठाने में मैंने मदद की और आंटी के पास लाकर बैठा दिया। उसने विनीत भाव से धन्यवाद कहा और शीघ्र ही आंटी से घुल–मिल गयी। पूरी यात्रा बातें करती रही–कभी मुझसे, कभी आंटी से। वे लड़के भी उसी ट्रेन में थे परन्तु उनकी हिम्मत नहीं हुई। चेन्नई में उसने हमें घूमने में मदद की और पूरा दिन साथ रही। उसने हमें अगली यात्रा के लिए विदा किया और विह्वल हो उठी। ट्रेन खुलने के बाद भी बहुत देर तक खड़ी हाथ हिलाती रही और मैं देखता रहा। आंटी भी उदास हो गयीं, बोलीं, ''तुम लड़के लोग, लड़कियों की भावनायें नहीं समझते।''

तुम्हीं बताओ, मैं क्या करता।

हम मिले नहीं हैं, फिर भी एक–दूसरे की भावनायें समझते हैं, सम्मान करते हैं। मैंने उसकी मदद की, बल्कि हम सब ने मदद की। उसने भी हमारा साथ निभाया, पूरे दिन साथ रही। मैंने जिम्मेदारी और धर्म निभाया। आज का समय होता तो हम एक–दूसरे से फेसबुक, ह्वाट्सअप या मोबाइल से जुड़ जाते और बोल देते जो भीतर होता। शायद उसके दिल की बात दिल में ही रह गयी।

''मैं तो हूँ ही काठ का उल्लू। कम से कम उसका पता ले लेता, शादी में निमन्त्रित करती तो प्यारा सा उपहार भेजता और उसके बच्चों का सहर्ष मामा बन जाता।

मैंने शुरु में ही लिखा है, एक अजनबी दुनिया में आ गया हूँ। यह हमारी कमजोरी है कि हम अपनी दुनिया, अपने लोगों और अपने भगवान की माया को पहचानने में बहुत देर कर देते हैं। जब पहचान होने लगती है तो वह भी आधी–अधूरी क्योंकि हमारा स्वार्थ, हमारा मन हमें उलझा देता है। कुछ अपने होते हैं, कुछ पराये और कुछ इतने पराये, बिल्कुल दुश्मन की तरह। कुछ इतने प्रिय कि उनके बिना जीना मुश्किल। एक तुम हो। पता नहीं, प्रेम की जड़ें गहरी हुई भी हैं या नहीं? पता है, मेरी इस शंका को कभी तुम स्वीकार नहीं करोगी और फिर कोई शर्त लगा दोगी कि ऐसी बातें करोगे तो सब बंद। भगवान की तरह तुम्हारे प्रेम की माया भी तुम्हीं जानो।

भगवान बुद्ध को बुद्धत्व की प्राप्ति होने में सैकड़ों जन्म लेने पड़े और हर जन्म में उनके सामने उनका लक्ष्य स्पष्ट होता था। उनकी सारी क्रियायें, सारी योजनायें उस जन्म की पूर्णता और सार्थकता के लिए होती थीं। उनका हर जन्म बुद्धत्व प्राप्ति की ओर बढ़ता हुआ कदम होता था और उनके भीतर की करुणा, दया, प्रेम जैसे उदात्त गुणों में पूर्णता होती जाती थी। उसी तरह तुम्हारा प्रेम है। तुमने प्रेम के सारे सैद्धान्तिक तत्वों को उजागर किया है। शायद ही किसी को प्रेम की इतनी समझ होती होगी वह भी पूर्ण अभिव्यक्ति और पूर्ण आत्म–नियन्त्रण के साथ।

तुम्हारी इस बात से सहमत हूँ कि आज लोगों में प्रेम जैसी कोई भावना नहीं है। बस वासना है। इसी में लोग डूबे हुए हैं और इसी की तलाश करते हैं। लोग खुश होते हैं और कहते हैं, ''मैं प्यार करता हूँ या करती हूँ।'' प्रेम में ऐसा नहीं होता। कह दिया गया या दावा किया गया तो समझ लो, भले ही और कुछ हो, प्रेम तो बिल्कुल नहीं है। वह तो एक के दिल में जन्म लेता है और दूसरे में उतर जाता है।

आधुनिक भूगोलवेत्ता हम्बोल्ट दक्षिणी अमेरिका की विशाल पर्वत श्रृंखलाओं, उपत्यकाओं और वहाँ के निवासियों के बीच अपनी खोज में लगा हुआ था। उसने वहाँ से अपने मित्रों को लिखा, ''मुझे ऐसा लगता है कि इस धरती पर अनेकता में एकता के सूत्र भरे पड़े हैं। प्रायः सर्वत्र एक ही नियम काम करता है, सूर्योदय होने पर लोग जागते हैं, भूख लगने पर कुछ खाना चाहते हैं, और प्यास केवल पानी से ही बुझती है।''

मैं उसमें कुछ जोड़ना चाहता हूँ, प्रेम की भूख सबको है तथा सम्पूर्ण पृथ्वी की अन्तरात्मा एक ही है। हमारे देश में ''अनेकता में एकता की अवधारणा'' की खूब चर्चा होती है। हम बहुभाषी हैं, अलग–अलग रंग–रुप के लोग हैं, अनेक बोलियाँ हैं फिर भी एकता के सूत्र से पूरा देश जुड़ा हुआ है।

सनातन संस्कृति ने हमें बाँध कर रखा है। अब मैं अपने मन की पीडा की बात कहना चाहता हूँ, ''मुझे एकता के उन धागों में थोड़ी टूटन सी दिखती है। आक्रान्ताओं और घुसपैठियों ने हमारी चिर–एकता को तोड़ने की कोशिश की है। दुखद है कि राज–सत्ता ने रोकने के बजाय उनका सहयोग किया या अपनी आँखें मूँद ली। सबसे बड़ा खेल धर्म–परिवर्तन की छूट और उनकी शिक्षा–संस्कृति के प्रसार में सत्ता के सहयोग ने किया। अब तो भाषा, धर्म, क्षेत्र, वाद आदि अनेक कारण हैं कि लोग लड़ने, मरने–मारने पर उतारू हैं।

तुमने कहा था, ''यदि चुनाव करना पड़े तो मैं सब छोड़ दूँगी और देश को चुनूँगी।'' मेरा दिल भर आया तुम्हारी इस ओजपूर्ण भावना को समझकर। मेरा प्रेम तुम्हारे लिए स्थायी–भाव में बदल गया। कितना अच्छा होता, देश का हर नागरिक पूरे समर्पण के साथ तुम्हारी तरह होता। जिस मिट्टी में हमारा जन्म हुआ, जिस वातावरण में हम पले–बढ़े, जहाँ का अन्न–जल ग्रहण किया और मृत्यु के उपरान्त जिस धरा–धाम में पंचतत्वों में मिल जाना है, उसके लिए अगाध प्रेम और मर–मिटने के अलावा कुछ दूसरा सोच पाना सम्भव ही नहीं है। यह हमारा देश है, और हम अपनी धरती को मां मानते हैं।

तुमने हंसकर कहा था, ''मैं बहुत खुश रहती हूँ। वैसे हमें मिलना नहीं है फिर भी पूरी जिन्दगी आपको खुश रखूँगी।''

पूरे विश्वास से कहना चाहता हूँ कि उस दिन से मैंने दुखी होना छोड़ दिया। तुम कहीं तो हो। तुम्हारा होना ही मेरे धड़कते दिल के लिए बहुत है। आसपास देखता हूँ तो आश्चर्य होता है कि यह पूरी दुनिया आपस में ही लड़ रही है और अपनी ऊर्जा नष्ट कर रही है। यह सही है कि कोई सूत्र है जो हर सम्बन्ध को टिकाये हुए है और लोग अपनी जिन्दगी की गाड़ी खिंचे चले जा रहे हैं। जानता हूँ, तुम होती तो सब कुछ पूर्णता में निभाती। तुमने कहा भी था, ''वह प्रेम ही क्या जिसमें मेरा अस्तित्व मिटकर एकाकार न हो जाये। मैं भी रहूँ और वो भी रहें, तब निश्चित है कि वहाँ प्रेम नहीं रहेगा।'' तुम खिलखिलाकर हंस पड़ी थी, बोली, ''मेरा प्रेम ऐसा है–न मैं रहूँ, न वो रहें, बस प्रेम रहे।'' उस समय तुम्हारी जो छवि उभरी मेरे दिलो–दिमाग में, वह अभी भी ज्यों की त्यों है–पूर्णतः आलोकित, गरिमामय और प्रेम से भरपूर। मैं भी जान गया हूँ कि प्रेम में प्राप्ति नहीं होती, प्रेम तो बलिदान मांगता है।

भगवान बुद्ध को बुद्धत्व की प्राप्ति होने में सैकड़ों जन्म लेने पड़े और हर जन्म में उनके सामने उनका लक्ष्य स्पष्ट होता था। उनकी सारी क्रियायें, सारी योजनायें उस जन्म की पूर्णता और सार्थकता के लिए होती थीं। उनका हर जन्म बुद्धत्व प्राप्ति की ओर बढ़ता हुआ कदम होता था और उनके भीतर की करुणा, दया, प्रेम जैसे उदात्त गुणों में पूर्णता होती जाती थी। उसी तरह तुम्हारा प्रेम है। तुमने प्रेम के सारे सैद्धान्तिक तत्वों को उजागर किया है। शायद ही किसी को प्रेम की इतनी समझ होती होगी वह भी पूर्ण अभिव्यक्ति और पूर्ण आत्म–नियन्त्रण के साथ। तुमने कभी कहा था, ''प्रेम भावनाओं की चीज है परन्तु भावनाओं में बहने वाले लोग प्रेम की वास्तविकता समझ नहीं पाते। विचित्र विरोधाभास है ना?'' कभी–कभी तुम बहुत निर्दयी सी लगती हो, भावना–शून्य और यथार्थवादी। मैं तुम्हारी स्थिति–परिस्थिति समझता हूँ और भाव–युक्त छवि में तुम्हारी विह्वलता की सच्चाई अनुभव करता हूँ। तुमने अच्छा नहीं किया है कि अपने पूजा के कमरे में मेरे नाम की पाषाण–प्रतिमा रख ली हो। अभी तो मैं जीवित हूँ और पूरी तरह समर्पित।

मैंने भी एक तरीका खोज निकाला है, अपने आसपास, चारों ओर तुम्हारी उपस्थिति, तुम्हारी खुशबू महसूस करता हूँ। कुछ पेड़ लगाया है मैंने और फूलों से भरी क्यारियाँ हैं। उन्हीं फूलों के बीच समय बिताता हूँ इस अनुभूति के साथ कि तुम अपने पूरे सौन्दर्य और मेरे प्रति सम्पूर्ण प्रेम के साथ यहीं कहीं हो। चिड़ियों का गायन और कोयल की कूक में तुम्हीं प्रतिध्वनित होती हो। तुम्हारा ही प्रेम–राग इन भौंरों की गुंजार में सुनायी देता है और बहती हुई शीतल बयार मुझे सराबोर करती है जैसे किसी ने मधुर संगीत की तान छेड़ दिया हो। मैं तुम्हारी जीवन्त उपस्थिति का साक्षी हूँ। •

पता : टाटा अरियाना हाऊसिंग,टावर–4 फ्लैट–1002

पोस्ट–घटकिया –751029 भुवनेश्वर, उडीसा, भारत

मो. : 9102939190

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में जनजातीय महिलाओं का योगदान

❑ प्रो. शैलेंद्र कुमार शर्मा

भारत एक विशाल भूमि खण्ड है, जिसमें सुदूर अतीत से विभिन्न समुदायों, अंचलों, भाषाओं और संस्कृतियों के लोग परस्पर प्रेम और बन्धुत्व के साथ रहते हैं। भाषाई, क्षेत्रीय, धार्मिक और सांस्कृतिक अंतर के बावजूद हम सदियों से एक रहे हैं। दुनिया के अलग–अलग देशों के आततायी शासकों और हमलावरों की निगाहें अनेक शताब्दियों से इस देश की ओर लगी रही। एक दौर में उनके नृशंस हमलों और षड्चंत्रों के साथ हमारी आपसी फूट और वैमनस्य के कारण यह देश विदेशी ताकतों और कालांतर में अंग्रेजों का गुलाम बन गया था। इस दौरान भी देश की आत्मशक्ति निरन्तर जाग्रत रही और अलग–अलग भागों में बसे असंख्य अमर वीरों के साथ सभी वर्ग एवं समुदाय के लोगों ने मिलकर स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए पुरजोर प्रयास किए। एक अर्थ में भारतरत्न महामना मदनमोहन मालवीय की इन पंक्तियों को वे सदियों से चरितार्थ करते रहे, पाप दीनता दरिद्रता और दासता पाप। प्रभु दीजे स्वाधीनता मिटै सकल संताप। भारत ने विदेशी शासन से अपने को मुक्त कराने के लिए जो दीर्घकालीन संघर्ष किया, वह राष्ट्रीय वीरता की अनुपम गाथा है। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम राष्ट्रीय क्रांति के रूप में सर्वव्यापी था, जिसे शताब्दियों से गुलामी की बेड़ियों में जकड़े भारतवासियों के उत्कट स्वदेशानुराग के साथ गहरे आत्मविश्वास और आक्रोश की स्वाभाविक अभिव्यक्ति के रूप में देखा जाना चाहिए। यद्यपि इसे अलग–अलग निहितार्थों के साथ देखते हुए अलग–अलग संज्ञाएँ दी गईं, किन्तु निर्विवाद रूप से इस संग्राम को मुगल साम्राज्य से लेकर ब्रिटिश सत्ता को उखाड़ फेंकने के सबसे सबल लोक–आन्दोलन के रूप में चिह्नित किया जा सकता है।

आज इस महान समर को नीचे से इतिहास लेखन की प्रवृत्ति के साथ पुनर्परिभाषित किया जा रहा है तो इसके बीज स्वयं इस संग्राम की प्रक्रिया, परिणति, जनश्रुतियों और मौखिक साहित्य में सहज ही उपलब्ध हैं। यह संग्राम नहीं छिड़ा होता, तो परवर्ती भारत का वह चेहरा नहीं होता, जिसे देख हम गर्व महसूस करते हैं। एक साथ कई दिशाओं में इस महा संग्राम का प्रभाव पड़ा है। इसका सीधा असर देश के बड़े हिस्से पर तो हुआ ही, तत्कालीन विदेशी ताकतों को झकझोर देने में भी यह महासंग्राम सफल रहा। यह एक ऐसा विलक्षण अवसर था जब समुदाय, धर्म, भाषा, क्षेत्र, वर्ग आदि की दीवारों को तोड़ कर भारतवासी विदेशी सत्ता को उखाड़ फेंकने के लिए लामबंद हुए थे। विदेशी हुकूमत को इस महासमर ने अन्दर से हिलाकर रख

हेलेन लेप्चा या सावित्री देवी

दिया था। भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के दौर में भी बाहरी और अंदरूनी दोनों व्यवस्थाओं को बदलने के लिए पुकार लगाई गई तो उसके पीछे स्वाधीनता संग्राम की घटनाएं थीं। क्या किसान, क्या जनजातीय बन्धु, क्या आम जनता, क्या सैनिक, क्या छोटे जमींदार और क्या ठिकानेदार–सबने मिलकर इस महायज्ञ में प्राणों की आहूति दी थी, जो निष्फल नहीं गई है।

भारतीय स्वाधीनता आंदोलन में देश के अलग–अलग भागों में निवासरत् जनजातीय एवं अन्य समुदायों की महिला शक्ति ने अपनी अविस्मरणीय भूमिका निभाई। उन्होंने विपरीत परिस्थितियों में राष्ट्र की मुक्ति के लिए स्वयं को समर्पित करने के साथ प्राण तक न्यौछावर कर जन सामान्य के हृदय में राष्ट्रीय चेतना का व्यापक स्तर पर अभिवर्द्धन किया। मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करने वाली जनजातीय स्त्रियों के अपार कष्ट और उत्पीड़न की अनकही और अनसुनी दास्तान, स्वदेशाभिमान के साथ स्वशासन के लिए संकल्प और तड़प की उज्ज्वल गाथा का गौरवशाली हिस्सा रही है। यह संग्राम सिर्फ राजनीतिक अधिकारों के लिए नहीं था, वरन जीवन के सभी क्षेत्रों में विदेशी शासन के दमन से मुक्ति और राष्ट्रीय–सांस्कृतिक चेतना जागृति का माध्यम था। स्वाधीनता संग्राम के दौर में देश के कोने–कोने में संघर्ष की भावना लोगों के दिलो–दिमाग में घर कर गई थी। समुदाय, क्षेत्र, लिंग, संस्कृति और सम्प्रदाय से ऊपर उठ कर देश के सभी भागों से इस आंदोलन को अक्षय शक्ति प्राप्त हुई। विशेषतौर पर स्वतंत्रता संघर्ष में जनजातीय महिलाओं का योगदान अतुलनीय है।

किसी भी राष्ट्र के निर्माण के लिए कई घटक कार्य करते हैं। भूमि, जन और संस्कृति से मिलकर ही राष्ट्र आकार लेता है। इसलिए राष्ट्र की रक्षा के लिए भूभाग, निवासी और संस्कृति की रक्षा हम सबका पावन दायित्व बनता है। जनजातीय समुदाय से जुड़े क्या पुरुष, क्या महिलाएं, क्या बुजुर्ग, क्या बच्चे, सभी लोगों ने अपने प्राणों की बाजी लगा कर देश के स्वाभिमान की रक्षा के लिए तत्परता दिखाई।

राष्ट्रीयता का उन्मेष सदियों की अविरल भाव धारा का प्रतिफल होता है। इसे अर्जित करते हुए युगानुकूल नव संस्कार देने में अनेक लोगों का श्रम और साधना लगती है। सदियों पहले से स्वदेश के प्रति प्रेम के साथ पुनर्जागरण और राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान विकसित राष्ट्रधर्मी मूल्यों का स्वाभाविक विकास क्रांतिकारी नायिकाओं के कार्यों में दिखाई देता है। स्वतंत्र भारत में इन साहसी स्त्रियों के नाम–रूप–कर्म का स्मरण हम सब के हृदय में ओज भर देता है, उनकी अमिट स्मृति नई ऊर्जा, नए वेग का संचार कर देती है। देश के विभिन्न भागों में बसे जनजातीय समुदायों से जुड़ीं शक्तिस्वरूपा महिला क्रांतिकारियों के योगदान के बिना राष्ट्र का वह स्वरूप निर्मित नहीं हो सकता था, जिसे लेकर आज हम गौरवान्वित हैं। वस्तुतः जनजाति एवं अन्य समुदायों की महिला क्रांतिकारियों के योगदान से जुड़ी अनुश्रुतियों और वाचिक परम्पराओं के आधार पर इतिहास के अलक्षित अध्यायों को नए सिरे से लिखना होगा।

भारत के निर्माण और रक्षा में जनजाति समुदाय की भूमिका युगों–युगों से रही है। जनजातीय समुदाय अत्यंत प्राचीन काल से राष्ट्र धर्म, मूल्यबोध और पर्यावरण संतुलन के दायित्वों के प्रति सजग रहा है। जब भी राष्ट्र की प्रतिगामी शक्तियां सक्रिय हुईं, उनके विरुद्ध जनजातीय समुदाय ने तीखा विद्रोह किया। अत्यंत सीमित साधनों के मध्य जीवन निर्वाह करने वाले आदिवासी समुदायों का बुद्धत्व चैतन्य था। सदियों पहले आचार्य चाणक्य ने क्रूर अत्याचारी शासक नंद को हटाने के लिए वनवासी सेनाओं का सहयोग लिया था। भील जनजातीय समुदाय का भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में विशिष्ट योगदान रहा है। मेवाड़ के महाराणा प्रताप और पूंजा भील ने इस राष्ट्र के स्वाभिमान को जगाया था। महाराणा प्रताप के संघर्ष काल में भील लड़ाकू पूंजा भील ने अपनी विशाल भीली सेना का नेतृत्व करते हुए मुगलों से युद्ध किया और अपूर्व शौर्य और साहस के साथ राणा प्रताप का सहयोग किया। महाराणा प्रताप को युद्ध में सफलता मिली। इस आधार पर महाराणा प्रताप सिंह की मां ने योद्धा पूंजा भील को अपना दूसरा बेटा मानते हुए उसे राणा पूंजा भील कहा था। इस तरह भील समुदाय ने महाराणा प्रताप के मस्तक को झुकने नहीं दिया। वस्तुतः

आदिवासी रणबांकुरों की दिव्य आत्माओं के प्रति श्रद्धा भाव के जागरण के प्रयास निरन्तर होना चाहिए। वीर पूर्वजों के पुरुषार्थ को याद करते हुए ही हम राष्ट्र को अंदर और बाहर से सशक्त कर सकते हैं। महासमर में योगदान देने वाले टंट्या भील, बिरसा मुंडा, भीमा नायक जैसे महानायकों के साथ स्त्री शक्ति की प्रतीक बलिदानी रानी दुर्गावती, सिनगी दई, फूलो और झानू, कालीबाई, मंगरी ओरंग (मालती मेम), रानी गाइदिन्ल्यू आदि का स्मरण नई चेतना जगाता है।

जनजातीय समुदाय ने सल्तनत काल से लेकर ब्रिटिश शासन के दौरान अनेक बार विद्रोह किए। जब भी उनकी स्वतंत्रता पर कुठाराघात हुआ, उन्होंने विद्रोह किया। इन विद्रोहों में जनजातीय स्त्री शक्ति का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। 1857 की क्रांति के पूर्व 1855 में संथाल क्रांति हुई थी। उस विद्रोह में दस हजार से अधिक आदिवासियों ने शहादत दी, जिनमें अनेक स्त्रियां थीं। देश की आजादी के लिए तिलका मांझी ने महत्वपूर्ण योगदान दिया। वे पहले क्रांतिकारी थे, जिन्हें फांसी पर लटकाया गया। तिलका माँझी भले ही खुद पुरुष थे, लेकिन उनकी बहनों ने भी उनके संग्राम में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने 1784 में ब्रिटिश शासन के खिलाफ विद्रोह किया था।

ऐतिहासिक जनजातीय आंदोलनों में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। चुआड़ विद्रोह (1767–1816) अंग्रेजों के विरुद्ध था, जो भूमिज विद्रोह और पाइक विद्रोह के नाम से भी प्रसिद्ध है। बंगाल के जंगल महल (अब कुछ भाग पश्चिम बंगाल और झारखण्ड में) के आदिवासी जमींदारों, पाइकों, सरदारों, और किसानों ने ईस्ट इंडिया कंपनी के खिलाफ जल, जंगल, जमीन के संरक्षण तथा कई प्रकार के शोषण से मुक्ति के लिए 1766 में यह आन्दोलन आरम्भ किया, जो 1834 तक चला। इस विद्रोह में जनजातीय स्त्रियां पुरुषों के साथ जंगल और पहाड़ों में छिपकर अंग्रेजी सेना को चकमा देती थीं और महत्वपूर्ण सूचनाएं पहुंचाती थीं। इस विद्रोह में कई जनजातीय महिलाएं पकड़ी गईं और क्रूर यातना का शिकार हुईं। 1857 के स्वतंत्रता संग्राम की वीरांगना रानी लक्ष्मीबाई यद्यपि सीधे तौर पर जनजातीय महिला नहीं थीं, लेकिन उन्होंने अपनी सेना में कई जनजातीय महिलाओं को शामिल किया और अंग्रेजों के खिलाफ संघर्ष किया। देश की अनेक जनजातीय महिलाओं ने अंग्रेजों के अत्याचार के खिलाफ विद्रोह किया। उन्होंने अपने समुदाय के अधिकारों की रक्षा के लिए संघर्ष किया और अपनी प्राणों की आहुति दी। अंग्रेजों की रीति–नीति और इतिहास को विकृत करने की कोशिशों के कारण जनजाति समुदाय की वीरांगनाओं को विस्मृत किया गया। इस दिशा में हमें सजग होना होगा।

मुगल काल में गोंडवाना की रानी दुर्गावती (5 अक्टूबर, 1524–24 जून, 1564) ने इस राष्ट्र के स्वत्व के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग किया था। उन्हें मुगल साम्राज्य के विरुद्ध गौरवभूमि गोंडवाना की रक्षा करने के लिए याद किया जाता है। वे गढ़ मंडला की रानी थीं, उन्होंने अपने पति की मृत्यु के उपरांत पुत्र वीर नारायण को गद्दी पर बिठाया और राजकाज संभाला। उन्होंने गोंडवाना क्षेत्र में पंद्रह वर्षों तक शासन करते हुए राज्य को समृद्ध किया। गोंडवाना की संपन्नता को देखकर मुगल सम्राट अकबर ने कई बार हमले किए, सुलह प्रस्ताव भी भेजे, किंतु रानी ने युद्ध को स्वीकारा। महल से निकलकर रणभूमि में जनजाति योद्धाओं का नेतृत्व किया। युद्ध के दौरान वे घायल हो गयीं। उन्होंने स्वयं को कटार भोंककर आत्म बलिदान किया। रामगढ़ के संस्कृत शिलालेख में गढ़ मंडला के राजवंश का उल्लेख है, जिसे रानी दुर्गावती की चौथी पीढ़ी के गोंड राजा ह्रदय शाह ने अपने महल में खुदवाया था। संग्राम शाह से प्रारंभ कर उसके पुत्र दलपत शाह और पुत्रवधू रानी दुर्गावती जिन्होंने दलपत शाह के देहावसान के बाद अपने तीन वर्षीय पुत्र वीर नारायण के नाम से आगे पन्द्रह वर्षों तक मुगलों से हुए अंतिम संग्राम में आत्म बलिदान तक गढ़ मंडला का राज्य चलाया। इन तीनों के राज्यकाल को मिलाकर तिरासी वर्षों की अवधि गढ़ मंडला राज्य के वैभव और विस्तार का स्वर्ण युग रहा है।

दलपत शाह, संग्राम शाह के सुयोग्य पुत्र थे। उनका विवाह कालिंजर के राजा कीरत सिंह चंदेल की पुत्री दुर्गावती से हुआ था। दुर्गावती चंदेल राजा की एकमात्र संतान थीं। सदा उनके साथ रहती थीं। वे शिकार आदि में भी साथ जाती थीं। साहसी, वीर, युद्ध कला और राजनीति को जानती थीं। सर्वगुण संपन्न और रूपवती थीं। दलपत शाह दानी, एक प्रतापी एवं प्रजा–वत्सल राजा थे। दलपत शाह ने संग्राम शाह के बाद राज्य को दृढ़ता प्रदान की। कवि ने उमापति दलपत कहकर दुर्गावती की तुलना उमा से की अर्थात् वे सुंदरता में पार्वती, दान में अन्नपूर्णा और युद्ध में स्वयं महाकाली थीं। दुष्टों का नाश करने में दुर्गावती रण में साक्षात दुर्गा थीं। पहले मालवा के सुल्तान बाजबहादुर और

फिर मुगल सेनापति आसफ खां ने गोंडवाना की संपन्नता और समृद्धि को देख लूट–मार के साथ युद्ध की शुरुआत की। सैनिक बल से युद्ध जीतने में असफल होने पर आसफ खां ने छल–प्रपंच शुरू कर दिए। आसफ खां कुछ दिन दमोह में रुका, वहीं से उसने प्रपंचों का जाल फैलाया, कई स्थानों पर लड़ाइयां हुईं। पहला युद्ध सिरगौर से उत्तर काराबाग में हुआ, दूसरा युद्ध सिरगौर में, तीसरा गढ़ और चौथा नरई नाला में हुआ। रानी नरई नाला पार कर पाती तो नागा पहाड़ में चढ़कर सुरक्षित हो जातीं, दुर्भाग्य से नरई नाला में 23 जून, 1564 को इतनी तेरा बाढ़ आ गयी कि रानी का हाथी सरमन भी नाला पार नहीं कर सका। नाले की बाढ़ से आसफ खां को पूरी सहायता मिली, वीर नारायण ने तीन बार मुगल सेना को पीछे खदेड़ दिया, युद्ध समाप्त हो गया। गोंडों की विजय हुई। दूसरे दिन मुस्लिम सेना के पास तोपखाना आ गया, युद्ध का परिणाम बदल गया, हारे हुए मुगल जीत गये, जीते हुए गोंड हार गये। वीर नारायण घायल हो गए और अंततः वीरगति को प्राप्त हो गये। रानी को तीर लगा, उन्होंने उसे निकालकर फेंका, लेकिन बाण के लोहे का नुकीला भाग अन्दर ही रह गया। जब दूसरा तीर लगा तो वे क्षत–विक्षत हो गयीं, उन्हें असह्य पीड़ा थी। उसकी अवस्था और परिस्थिति देखकर सैनिकों ने सुरक्षित स्थान पर चलने की विनती की, लेकिन रानी ने उत्तर दिया, मैं युद्ध भूमि छोड़कर नहीं जाऊंगी, इस युद्ध में मुझे विजय अथवा मृत्यु में से एक चाहिए। 24 जून, 1564 को रानी ने पराजय निकट देख अपनी ही कटार से स्वयं को मारकर आत्म बलिदान किया, उनका जीवित शरीर दुश्मनों को नहीं मिल सका। आज भी यह दिन उनकी स्मृति में बलिदान दिवस के रूप में मनाया जाता है।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम राष्ट्रीय क्रांति के रूप में सर्वव्यापी था, जिसे शताब्दियों से गुलामी की बेड़ियों में जकड़े भारतवासियों के उत्कट स्वदेशानुराग के साथ गहरे आत्मविश्वास और आक्रोश की स्वाभाविक अभिव्यक्ति के रूप में देखा जाना चाहिए। यद्यपि इसे अलग–अलग निहितार्थों के साथ देखते हुए अलग–अलग संज्ञाएँ दी गईं, किन्तु निर्विवाद रूप से इस संग्राम को मुगल साम्राज्य से लेकर ब्रिटिश सत्ता को उखाड़ फेंकने के सबसे सबल लोक–आन्दोलन के रूप में चिह्नित किया जा सकता है।

राष्ट्र की रक्षा और विकास में झारखण्ड की जनजातीय महिलाओं का अविस्मरणीय योगदान रहा है। झारखण्ड की जनजातीय महिलाओं ने सदियों से अपने सामुदायिक नेतृत्व क्षमता का परिचय दिया है। उराँव वीरांगना सिनगी दई और कईली दई का नाम सुनकर ही हम उनके शौर्य और पराक्रम से रोमांचित हो उठते हैं। सत्रहवीं शताब्दी में बिहार के रोहतासगढ़ पर उराँव जनजाति का राज्य था। उरांव जनजाति के कुडुख लोकगीतों में रोहतासगढ़ को उरांव राजाओं की धरोहर कहा गया है। इन गीतों में रोहतासगढ़ को रुइदास कहा गया है। औरंगजेब ने उराँव समुदाय को अपने अधीन करने के लिये लगातार तीन बार आक्रमण किया। बारह वर्षों तक जारी रहने वाले इस युद्ध में जनजातियों ने हमलावरों को अपने राज्य पर कब्जा नहीं करने दिया। रोहतासगढ़ की उराँव समुदाय की गौरव अमर बलिदानी सिनगी दई ने चम्पू दई और कईली देई के नेतृत्व में मध्यकाल में ही पूरी क्षमता और साहस के साथ तुर्क – अफगानों मुकाबला किया था। पड़हा राजा की बेटी सिनगीदई ने रोहतासगढ़ के किले की रक्षा करने के लिए पारम्परिक हथियारों के जरिये महिलाओं को साथ लेकर युद्ध रणनीति बनाई थी। उराँव महिलाओं ने सिनगीदई, चम्पूदई और कईलीदई के नेतृत्व में तीन बार विजय प्राप्त की थी। यह सामुदायिक नेतृत्व की परम्परा का महत्वपूर्ण उदाहरण है। सिनगी दई ने अपने उरांव राज्य को उस समय संभाला जब संगठित सेना तुर्कों के साथ युद्ध में बिखर चुकी थी। लड़ने वाले पुरुष योद्धा राष्ट्र रक्षण में प्राण न्यौछावर कर चुके थे। ऐसे समय में रोहतासगढ़ के राजा रुईदास की पुत्री राजकुमारी सिनगी दई ने योग्यता, वीरता, बुद्धिमत्ता, चातुर्य के साथ उराँव राज्य को संभाला। मुगलों ने उराँव राज्य पर निगाहें गढ़ा रखी थीं। जब दो बार आक्रांता सफल नहीं हो पाए तब मुगलों के भेदिये ने उन्हें बताया कि चौत्र मास में उराँव लोग सरहुल मनाते हैं। मौज मस्ती के इस उत्सव में वे युद्ध का सामना नहीं कर पायेंगे। साथ ही वहां के गुप्त प्रवेश द्वार की भी जानकारी दे दी।

सरहुल के अवसर पर मुगलों का आक्रमण हुआ, परंतु ये वीरों की वीरता के सामने टिक नहीं पाये और भागने के अलावा उनको कोई चारा नहीं था। भेदिए को बुलाया गया, उसने जो राज बताया इससे मुगल सेनापति को विश्वास ही

नहीं हुआ। उसने कहा कि जिन वीरों से आप पराजित हुए हैं, वे उरांव नारियां हैं। जिसे आप राजा समझ रहे थे वह तो राजा की बेटी सिनगी दई है। वह युद्ध का संचालन एक कुशल योद्धा की तरह करती है। सेनापति का दायित्व सेनापति की पुत्री कईली दई निभा रही है। मुगल सेनापति को विश्वास नहीं हुआ। इसके सबूत के लिये भेदिए ने कहा, आप सोन नदी के किनारे जायें और छुपकर देखें जो सैनिक दोनों हाथों से पानी लेकर मुंह धो रहे हैं, वे महिला सैनिक हैं। मुगल सेना ने इस रहस्य को जांचा और अपने सैनिकों को रहस्य बताकर गढ़ की ओर बढ़े। सरहुल पर्व के नशे में पुरुष बेसुध थे। परंतु महिलाएँ अपने गढ़ की रक्षा के लिये तैयार खड़ी थीं। सिनगी दई और कईली दई के नेतृत्व में उराँव नारियां पुरुष वेश में मुगलों पर टूट पड़ीं। मुगल सेना भागने लगी। भागती हुई सेना देखकर मुगल सेनापति चिल्लाया, भागो मत, ये पुरुष नहीं स्त्रियां हैं, सिनगी दई, कईली दई महिलाएँ हैं। मुगल सेना ने अपनी कायरता पर लज्जित हो दुगने वेग से आक्रमण किया। युद्ध में नियम की सारी सीमाएँ तोड़ दी गईं। मुगल सेना बढ़ती जा रही थी। मुगल सेना के सामने उराँव सेना संख्या में कम थी। सिनगी दई केवल एक वीरांगना ही नहीं, होशियार और युद्ध कौशल में निपुण थी। उन्होंने हिम्मत के साथ बुद्धिमानी से काम लिया। जब मुगल सेना गढ़ में प्रवेश करने लगी, तब किले में मिर्च की बुकनी का धुआं छोड़ दिया, चारों ओर लाल मिर्च की बुकनी उड़ने लगी। सैनिकों की आंखें बंद हो गई थीं। जब धुआं छटा तो घोर आश्चर्य, किले में एक भी पुरुष या नारी नहीं थे। सिनगी दई और कईली दई सभी को गुप्त रास्ते से बाहर निकाल कर सुरक्षित स्थानों पर पलायन कर गयी थीं। इन दोनों वीरांगनाओं के साहस और शौर्य के कारण एक भी उराँव सैनिक मुगलों के हाथ नहीं लगा।

सिनगी दई ने महिलाओं को प्रशिक्षित करने के लिए उराँव समाज के शिकार उत्सव विशु सेन्दरा को चुना था। इस स्त्री सेना के बल पर तुर्कों–अफगानों के आक्रमण को सिनगी ने विफल कर अपने शौर्य का परिचय दिया। वीरांगना सिनगी दई की याद में आज भी बारह वर्षों में उराँव महिलाएँ मुक्का सेंदरा अर्थात् जनी शिकार उत्सव मनाती हैं, जिसका उद्देश्य उरांव वीरांगनाओं को श्रद्धांजलि देना और उनकी वीरता को प्रदर्शित करना है। इस उत्सव में महिलाएँ मुगलों के प्रतीकस्वरूप शिकार करती हैं। यह शिकार उस ऐतिहासिक घटना का स्मरण दिलाता है जब वीरांगना सिनगी दई और कईली दई के शौर्य से जनजातियों के प्राण बचे थे।

कित्तूर की रानी चेन्नम्मा (1778 –1829) कर्नाटक की एक महान स्वातंत्र्य प्रेमी महिला थी, जिन्होंने ब्रिटिश शासन के खिलाफ लड़ाई लड़ी थी। उनका जन्म काकती बेलगावी, कर्नाटक में 23 अक्तूबर, 1778 को हुआ। वे प्रथम भारतीय महिला शासक थीं, जिन्होंने 1824 में ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी के खिलाफ सशस्त्र विद्रोह का नेतृत्व किया। लिंगायत समुदाय से जुड़ी रानी चेन्नम्मा का विवाह कित्तूर के राजा मल्लासरजा देसाई से हुआ था, जिनसे उन्हें एक बेटा हुआ। 1816 में अपने पति की मृत्यु के बाद, 1824 में उनके बेटे की भी मृत्यु हो गई। सिंहासन का कोई उत्तराधिकारी न होने के कारण, कित्तूर रानी चेन्नम्मा ने शिवलिंगप्पा को गोद लिया, इस बात से नाराज अंग्रेजों ने उन्हें शिवलिंगप्पा को राज्य से निर्वासित करने के लिए मजबूर किया। रानी ने ब्रिटिश आदेश की अवहेलना करने का फैसला किया और अपने राज्य का समर्पण नहीं किया, जिसके कारण युद्ध छिड़ गया। अंग्रेजों ने कित्तूर का खजाना और हीरे–जवाहरात जब्त करने की कोशिश की, इस दौरान भड़के विद्रोह में ब्रिटिश सैनिकों के साथ एक कलेक्टर भी मारा गया। दो ब्रिटिश अधिकारियों को बंधक बनाया गया। दूसरे हमले में चेन्नम्मा को गिरफ्तार कर जेल में डाल दिया गया, जहां उनकी मृत्यु हो गई। रानी चेन्नम्मा की मृत्यु 1829 में जेल में हुई थी। उनकी मृत्यु के बाद, उन्हें कर्नाटक की एक महान वीरांगना और स्वतंत्रता सेनानी के रूप में याद किया जाता है।

रानी चेन्नम्मा अपने प्रसिद्ध नारे के लिए जानी हैं, नन्ना देशाड़ा मट्टी बिट्ठु निमगेक्के कोडाबेकु कप्पा? अर्थात् मैं तुम्हें टैक्स क्यों दूँ, मैं तुम्हें अपने देश की मिट्टी क्यों दूँ? रानी चेन्नमा की विरासत आज भी जीवित है। ब्रिटिश सेना के खिलाफ उनकी पहली जीत को आज भी हर साल कित्तूर में आयोजित होने वाले कित्तूर उत्सव के दौरान याद किया जाता है। नई दिल्ली में भारतीय संसद परिसर में भी रानी चेन्नम्मा की एक प्रतिमा स्थापित है। रानी चेन्नमा का संबंध लिंगायत समुदाय से था, जो मुख्य रूप से कर्नाटक के उत्तरी भाग में निवासरत है, और अपनी सैन्य एवं प्रशासनिक क्षमताओं के लिए जाना जाता है। महान योद्धा एवं स्वतंत्रता सेनानी संगोली रायण्णा कुरुबा समुदाय से थे, जिन्होंने 19वीं

वीरांगना कालीबाई सिनगी दई वीरांगना लीपा

सदी में कित्तूर की रानी की सेना में अंग्रेजों के विरुद्ध लड़ाई लड़ी थी। कुरुबा समुदाय भी मुख्य रूप से कर्नाटक के उत्तरी भाग में निवासरत है। रानी चेन्नमा को देश की एक प्रमुख वीरांगना के रूप में आज भी याद किया जाता है। कित्तूर साम्राज्य के सेना प्रमुख संगोली रायण्णा को 26 जनवरी, 1831 को, तैंतीस साल की उम्र में, ब्रिटिश अधिकारियों ने नंदगढ़ गाँव के पास एक बरगद के पेड़ से फाँसी दे दी। वे मृत्यु तक ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी से लड़े। आज भी कर्नाटक में कित्तूर चेन्नम्मा, सांगोली रायन्ना और स्वतंत्रता–पूर्व के कर्नाटक के अनेक स्वतंत्रता सेनानियों के बारे में वीरतापूर्ण लोकगीत छंद के रूप में प्रसिद्ध जी गेय गाथाएँ गाई जाती हैं। दोनों की अमर गाथाएँ पीढ़ियों से प्रेरणा का संचार कर रही हैं।

अंग्रेजों की दमन और शोषणकारी शासन व्यवस्था एवं अत्याचारी नीतियों के विरुद्ध संघर्ष छेड़ने में झारखंड क्षेत्र के आदिवासी समुदाय ने कई बार महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने क्षेत्रीय परिप्रेक्ष्य में ही सही लेकिन अंग्रेजी सत्ता को सशस्त्र चुनौती दी। जल, जंगल, जमीन के साथ अपनी संस्कृति और परम्परा की रक्षा के लिए उन्होंने सर्वस्व न्योछावर करने से भी अपने कदम पीछे नहीं हटाए। इन सशस्त्र जनजातीय संघर्षों में जनजातीय महिलाओं की सक्रिय और प्रभावशाली भूमिका रही है। इन संघर्षों में जनजातीय महिलाएँ पुरुषों के साथ कदमताल करती नजर आयी है। इसका एक बड़ा कारण था, जनजातीय समाजों का कहीं मातृप्रधान होना और व्यापक स्तर पर उनमें लैंगिक समानता का होना है।

1855 के संताल विद्रोह या हूल आन्दोलन ने ब्रिटिश सत्ता के जड़ों पर गहरी चोट की थी। इस विद्रोह में दो वीरांगना बहनों फूलो–झानो के भूमिका ने मानो नारी शक्ति एवं संगठन क्षमता को राष्ट्र–निर्माण में जनजातीय महिलाओं की भूमिका को प्रमाणित कर दिया। उनके ओजस्वी विचार एवं नेतृत्व क्षमता ने भारतीय जनजातीय नारी शक्ति को एक नई ऊँचाई दी। भारत में अंग्रेजी राज स्थापित होने के पश्चात आदिवासी क्षेत्रों में हुए कई आन्दोलन और विद्रोहों में जनजातीय महिलाओं ने अपनी सक्रिय भूमिका निभाई। झारखण्ड के प्रथम स्वतंत्रता सेनानी तिलका मांझी के नेतृत्व में चले विद्रोह में फूलमनी मझिआईन ने अंग्रेजी साम्राज्य का मुकाबला किया। इसी प्रकार कोल विद्रोह (1827–1832) के समय सिलागांईं में विद्रोह का नेतृत्व वीर बुधु भगत ने किया। वीर बुधु भगत तथा उनके तीनों बेटे हलधर, गिरधर और उदयकरण के साथ उनकी दो बेटियों रूनिया और झुनिया के नेतृत्व में जननायकों की सेना ने जमींदारों, सूदखोरों और अंग्रेजों के खिलाफ संघर्ष शुरू किया। उनके परिवार की इन दो बहनों ने अपने अपार साहस एवं निडरता को प्रमाणित किया था। रूनिया और झुनिया अपने पिता के साथ गांव–गांव जाकर लोगों को संगठित करती थीं। वे दोनों युद्ध विद्या में पारंगत थीं। उन्होंने अंग्रेजों के खिलाफ लड़ाई लड़ी और शहीद हुईं।

संथाल परगना देशभक्तों, वीर–वीरांगनाओं और क्रांतिकारियों की पवित्र जन्मभूमि है। संथाल महिलाओं की शक्ति, शौर्य और पराक्रम का अनूठा इतिहास है। 30 जून, 1855 को भोगनाडीह में सिद्धो–कान्हू, चाँद–भैरव के नेतृत्व में संथाल विद्रोह प्रारम्भ हुआ था। सिद्धो–कान्हू का जन्म झारखंड के संथाल परगना में हुआ था। इन दोनों भाइयों ने 1855–1856 में अपने समुदाय के अधिकारों और स्वतंत्रता के लिए लड़ाई लड़ी थी। उन्होंने ब्रिटिश शासन के खिलाफ विद्रोह का नेतृत्व किया था, जिसमें उन्होंने कई सफलताएं हासिल की थीं। इस विद्रोह में सिद्धो–कान्हू की दो बहनों फूलो और झानो ने अपने विचार, आह्वान एवं संगठन क्षमता से आन्दोलनकारियों के ओज एवं उत्साह को निरन्तर बनाये रखने का कार्य किया। संथाल जनजाति की गौरव वीरांगना फूलो–झानों का जन्म भोगनाडीह, साहेबगंज, झारखण्ड में हुआ था। दोनों बहनों ने हथियार और रसद प्रबंध के कार्य को बड़ी कुशलता से किया। इक्कीस अंग्रेजों को मारकर फूलो एवं झानो ने अपने महान पराक्रम का परिचय दिया। जब सिद्धो और कान्हू को ब्रिटिश सेना ने पकड़ लिया और उन्हें फांसी दे दी गई, तो फूलो और झानो ने विद्रोह का नेतृत्व करने का फैसला किया। 30 जून, 1855 में क्रांतिकारी

सभा में दोनों बहनों ने हिस्सा लिया। दोनों बहनें घोड़ों पर बैठकर गांव के घर–घर में सखुआ डाली का निमंत्रण देती थीं और हूल आंदोलन में आने के लिये कहती थीं। इसके लिये उन्होंने दिन–रात परिश्रम किया। उन्होंने सभा में महिलाओं को लाने और उनके गांव तक वापस पहुंचाने की जिम्मेदारी ली। इससे बड़ी संख्या में महिलायें आंदोलन से जुड़ गयीं। इस अभियान में कई स्थानों पर अंग्रेजों के साथ उनका संघर्ष भी हुआ। लेकिन दोनों बहनें अपने रणकौशल के बल पर अंग्रेजों से युद्ध करते हुए बाहर निकल जाती थीं। दोनों की क्रांतिकारी गतिविधियों से भयभीत होकर अंग्रेज सैनिक उन्हें गिरफ्तार करना चाहते थे। दोनों बहनें गुरिल्ला तथा छापामार युद्ध करती थीं। उन्होंने अंग्रेजी सेनाओं को तहस–नहस कर दिया था। उनके साथ सैकड़ों संथाली युवतियां देश को स्वतंत्र करने के लिये चल पड़ी थीं। इस संघर्ष में बहुत सी महिलायें वीरगति को प्राप्त हुई। 1856 में वरलाईद में बड़ा संघर्ष हुआ। इसी वरलाईद की लड़ाई में दोनों बहनें फूलों और झानों शहीद हो गयीं। जब तक वे जीवित रहीं, अंग्रेज उनके शरीर को छू तक नहीं सके। इस तरह इन दोनों बहनों ने नारी शक्ति का आदर्श प्रस्तुत किया। स्त्री शक्ति, स्वाभिमान और स्वदेशरक्षा के संकल्प को नवीन चेतना प्रदान की। उनकी वीरता और स्वतंत्रता की लड़ाई को आज भी याद किया जाता है और वे सम्पूर्ण भारत के लिए प्रेरणा स्रोत हैं। झारखंड के कई स्थानों पर सिद्धो–कान्हू, फूलों और झानो की मूर्तियां स्थापित की गई हैं। उनके नाम पर कई संस्थानों और योजनाओं की स्थापना की गई है। उनकी वीरता और स्वतंत्रता की लड़ाई को कई पुस्तकों और फिल्मों में चित्रित किया गया है। संथाली में आज भी गाया जाता है, दू ठो मांझी बिटिया/बआम गाछे उपोरे फांसी भेल। यानी कि दो संथाली बेटियों को आम के पेड़ से फांसी पर लटका दिया गया। फूलो और झानो पर एक संथाली कविता है, फूलो झानो आम दो तीर रे तलरार रेम साअकिदा/आम दो लट्टु बोध्या खोअलहारे बहादुरी उदुकेदा। इसका अर्थ है कि फूलो झानो तुमने हाथों में तलवार पकड़ी, तुमने भाइयों से बढ़कर वीरता दिखाई। तुमने इक्कीस अंग्रेज सिपाहियों की हत्या की, तुम दोनों का नाम अमर हो गया। सही अर्थों में वे देश के लिये बलिदान करने वाली महिलाओं में अद्वितीय शौर्य की मिसाल हैं। संथालों की महान जनक्रांति सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक अस्मिता की रक्षा का प्रतीक थी। यह जनजातियों की विशिष्ट जीवनशैली, सामाजिक एकजुटता, धार्मिक जागरण, जनजातीय भावनाओं, जीवन मूल्यों तथा चारित्रिक विशेषताओं का अनूठा उदाहरण है, वहीं उनकी भारत–भक्ति भी अनूठी है।

अंडमान निकोबार के गहरे नीले समुद्र और समुद्र तट की मोतियों से सफेद रेत के बीच स्वतंत्रता संग्राम के बलिदान के अनेक अनछुए पहलू छिपे हैं। भारत के स्वतंत्रता संग्राम में ग्रेट अंडमानियों ने बलिदान दिया है। इन्हीं बलिदानियों में एक वीरांगना हैं लीपा ग्रेट अंडमानी। स्त्री शक्ति के योगदान की दृष्टि से उनका नाम स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में बड़े आदर के साथ लिया जाता है। हम वीरांगना लीपा को अंडमान की पन्नाधाय (पन्ना दाई) कह सकते हैं, जिन्होंने अपने गद्दार पति दूधनाथ तिवारी की अजन्मी संतान की बलि दे दी। पति दूधनाथ तिवारी ने अंडमानियों की पूरी रणनीति की जानकारी अंग्रेजों को दे दी और अंडमानी एक महत्वपूर्ण युद्ध हार गए।

अंडमान में 17 मई, 1859 को अंग्रेजों और अंडमान की जनजातियों के बीच एबरडीन की लड़ाई हुई थी। उस युद्ध में करीब 15 हजार अंडमानियों ने अंग्रेजों के खिलाफ लड़ाई लड़ी थी। एबरडीन युद्ध में अंग्रेजों से ग्रेट अंडमानियों का सामना हुआ। लीपा के पति अंग्रेज सिपाही दूधनाथ तिवारी की गद्दारी से एबरडीन युद्ध की हार हुई। लीपा ने गद्दार पति के गर्भ को जीवन देने के स्थान पर अपने मातृत्व का बलिदान दिया और बलिदान की अनूठी अमर गाथा लिख दी। क्या कोई बलिदान गर्भ के बलिदान से भी अधिक बड़ा हो सकता है? अंडमान निकोबार की गहराई में छुपे हुए इस बलिदान की गाथा 17 मई, 1859 को जनजाति समूहों द्वारा अंग्रेजों के विरुद्ध निर्णायक युद्ध साबित होने वाले एबरडीन युद्ध में छुपी है। यह वह समय था जब 1857 के भारतीय स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों को काले पानी की सजा दी जाती थी। वीरता की घटनाओं के बीच लीपा की वीरता की कहानी आज भी ग्रेट अंडमानी समुदाय के हृदय में है। अंग्रेजों द्वारा जनजातियों की जमीन पर पत्थरों की कालोनी स्थापित करके जंगलों को काटते देखा तो ग्रेट अंडमानी जनजातियों ने युद्ध के लिए अंग्रेजों को ललकारा। अंग्रेजों के सिपाही दूधनाथ तिवारी ने ग्रेट अंडमानियों का विश्वास अर्जित कर लिया था और एक वर्ष से अधिक का समय उनके साथ बिताया। उसने वहां के निवासी पूटेह की कन्या लीपा से विवाह कर लिया, लेकिन क्या कोई विश्वासघात इतना बड़ा

फूलो और झानो

हो सकता है जो मातृत्त्व को भी मजबूर कर दे कि यह मातृत्व की बलि चढ़ा दे? विश्वासघात की पराकाष्ठा थी। पूरा अंडमानी समाज अँग्रेजी हुकूमत के विरुद्ध जाग उठा था। 6 अप्रैल 1859 को दो सौ ग्रेट अंडमानियों ने अंग्रेजों की जासूसी की। 14 अप्रैल, 1859 को पंद्रह सौ ग्रेट अंडमानियों ने अंग्रेजों के साथ रह रहे स्वतंत्रता संग्राम के कैदियों को जंगल को काटने से रोका। दूसरी ओर लीपा की रणनीति तय हो जाने पर अंग्रेजों के विरुद्ध अंतिम युद्ध की तैयारी में जुट गए और 17 मई, 1859 का वह दिन था जब पंद्रह हजार ग्रेट अंडमानियों ने निर्णायक युद्ध के लिये कूच कर दिया। एक साल चौबीस दिन के ग्रेट अंडमानी के विश्वास पर चोट करते हुए, दूधनाथ ने अंग्रेजों को वह सारी जानकारी उपलब्ध करायी जो एक सेना को युद्ध के लिये आवश्यक होती है। एबरडीन युद्ध में हार के परिणाम ने अंडमान निकोबार के जनजाति समूहों के भविष्य की कभी न खत्म होने वाले काले पानी की सजा से भी बदतर बना दिया। क्या गर्भवती महिला, क्या बच्चे, बूढ़े और जवान सभी को युद्ध बंदी बना लिया गया और कइयों को मौत के घाट उतार दिया गया। अंग्रेजी हुकूमत द्वारा दूधनाथ को शाबासी दी गयी। इसमें लीपा के साथ पूरा ग्रेट अंडमानी समाज का भविष्य पिस गया। लीपा को पुनः परीक्षा देनी थी। क्या ऐसी कोई परीक्षा हो सकती है जहां पर मातृत्व का चढ़ावा चढ़ाना हो? लेकिन राष्ट्रप्रेम के लिए सर्वस्व न्योछावर करने की जनजातीय जीवन दृष्टि को जीतना ही था। अपने भीतर देशद्रोही के खून को पलता देख लीपा ने उसे नष्ट करना ही बेहतर समझा। सर्वोच्च बलिदान की प्रथम पंक्ति पर लीपा ने अपना स्थान अंकित करते हुए राष्ट्र के लिये बलिदान दिया। अंडमानी वासियों के लिए यह अविस्मरणीय बात है कि उनके पूर्वजों ने सेल्यूलर जेल की दीवारों को मंदिर समझकर अपनाया था। वह पराधीन मानसिकता के विरोधी थे। हमारे पूर्वजों को जेल में डालने वाले अंग्रेज हमें पराधीन बनाकर शासन करना चाहते थे। हमारे पूर्वजों ने जेल जाना स्वीकार किया, पराधीनता को नहीं।

मिजोरम की रानी रोपुइलियानी (जन्म 1828–बलिदान 3 जनवरी, 1895) ने अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिये दक्षिण मिजोरम में अंग्रेजों के विरुद्ध स्वाधीनता संग्राम छेड़ा। उन्होंने उद्घोष किया था, मिजोरम की धरती मेरी मां है और मैं मेरी मां का व्यापार नहीं करती। उन्होंने अपने राज में अंग्रेजों को प्रवेश नहीं करने दिया, न ही कोई संधि की और न अपनी प्रजा का अंग्रेजों द्वारा शोषण होने दिया। उनके नेतृत्व में मिजोरमवासियों ने हथियार उठा लिये थे। अंग्रेजों ने डेंगलूम गांव पर हमला बोला, रानी को बंदी बना लिया गया। 3 जनवरी, 1895 को रानी ने जेल में ही अपना देह त्याग दिया। रानी रोपुइलियानी का जन्म 1828 को उत्तरी मिजोरम के प्रमुख मिजो राजा लाल संमूगा के यहां हुआ था। उनके तीन भाई और दो बहनें थीं। वे अपने परिवार और समुदाय की गौरवशाली परंपराओं के प्रति सजग रहती थीं। पिताजी ने 1796 से 1842 तक राज किया। इनका विवाह दक्षिण मिजोरम के राजा बांडूला से हुआ। पहले अंग्रेज और स्थानीय मिजो समुदाय सह–अस्तित्व की स्थिति में पड़ोसी के रूप में रहते थे। वहां अंग्रेजों के बागान थे। धीरे–धीरे अंग्रेज मिजो समुदाय के रीति–रिवाजों में दखल देने लगे थे। अपनी सीमा विस्तार के क्रम में मिजोरम की पहाड़ियों को भी हथियाने में लग गये। अंग्रेजों ने रानी रोपुइलियानी के भाई साइकुंआ को विवश करके उत्तरी मिजोरम के संधि प्रस्ताव पर हस्ताक्षर करवा लिये। इसके बाद अंग्रेज दक्षिण मिजोरम के राजा रोपुइलियानी के पति बांडूला के पास संधि प्रस्ताव लेकर गये। वे डेंगलूम गांव की पहाड़ियों पर से सेना के आने–जाने का रास्ता बनाना चाहते थे। राजा ने इस संधि को नकार दिया। इस प्रस्ताव की अस्वीकार करने पर मेजर सी. एस. मरे उनका शत्रु बन गया। उसने 1889 में पुनः प्रस्ताव भेजा और धमकी भी दी। अस्वस्थता के बावजूद राजा बांडूला ने अपने राज्य की भूमि पर अंग्रेजों को कब्जा करने से इंकार कर दिया। अनेक प्रलोभन दिये गये लेकिन अपनी स्वतंत्रता पर गर्व करने वाले राजा बांडूला को अंग्रेजों का आधिपत्य स्वीकार नहीं था। 1889 में राजा की मृत्यु हो

गयी। इसके बाद उनकी पत्नी रोपुइलियानी को रानी बनाया गया। अपने वीर पिता और पति के गुण उनके भी चरित्र में थे। उन्होंने लुशाई क्षेत्र में अंग्रेजों के बढ़ते प्रभाव को देखा तो उन्होंने उसका विरोध किया। यह वह समय था जब अधिकांश मिजो प्रमुख अंग्रेजों से जा मिले थे। रानी रोपुइलियानी ने अंग्रेजों के आदेश को चुनौती देते हुए अपनी प्रजा से अंग्रेजों को कर और नजराना देना बंद करने के लिये कहा। उन्होंने अंग्रेजों की सत्ता को चुनौती देते हुए कहा कि न तो मेरे लोगों ने और न ही मैंने कभी किसी को कर दिया है और न किसी के लिये जबरदस्ती मजदूरी की है। हम अपनी जमीन के स्वयं मालिक हैं। उनका मानना था कि अपनी जमीनों और अपनी प्रजा की रक्षा करना हमारा कर्त्तव्य है। उन्होंने लोगों को एकत्र करने और युद्ध कला में पारंगत होने का आह्वान किया। रानी ने जब अंग्रेजों के प्रस्ताव को नहीं माना तब 8 अगस्त, 1893 को कैप्टन जे. शेक्सपियर, कैप्टन आर.ए.एस. यूथेसन के आदेश पर कुक ने अस्सी सैनिकों को लेकर डेंगलूम गांव पर हमला बोल दिया। रानी और उनके सैनिक बहुत बहादुरी से लड़े किंतु आधुनिक हथियारों से लैस अंग्रेजी सेना के सामने वे वीरता पूर्वक लड़े। रानी के पास पुनः संधि प्रस्ताव रखा गया पर उन्होंने इसे अस्वीकार कर दिया। रानी को बंदी बना लिया गया, उन्हें बंगाल के चटगांव जेल में अनेक यातनाएँ दी गयीं। परिणामतः जेल में ही 3 जनवरी, 1895 को साहस की प्रतिमूर्ति रानी रोपुइलियानी ने अंतिम श्वास तक संघर्ष किया।

बिरसा मुंडा के नेतृत्व में हुए मुंडा विद्रोह उलगुलान (1894–1900) में माकी, थींगी, नेगी, लिंबू और चंदी ने महिलाओं को संगठित किया और अंग्रेजों के खिलाफ उलगुलान में पुरुषों के बराबर की साझेदार बनीं। इतिहास प्रसिद्ध बिरसा मुण्डा के आन्दोलन में जनजातीय महिलाओं ने अपनी संस्कृति, सम्मान, अधिकार और अस्मिता की रक्षा के लिए विश्व के सबसे बड़ी साम्राज्यवादी सरकार का पूरे साहस के साथ सामना किया। बिरसा मुण्डा के सहयोगी गया मुण्डा की पत्नी माकी मुण्डा एवं उनके दोनों बेटियों के पराक्रम एवं साहस को, अपने माटी की रक्षा के लिए मर मिटने की भावना को इतिहास कैसे भूला सकता है। बिरसा मुंडा का जन्म 15 नवंबर, 1875 में उलिहातू, रांची जिला, झारखंड में हुआ था। वे एक किसान थे। उन्होंने 1895 से 1900 तक ब्रिटिश शासन के खिलाफ जनजातीय आंदोलन का संचालन और नेतृत्व किया। 3 फरवरी, 1900 को उन्हें गिरफ्तार किया गया और 3 जून, 1900 को कारागार में उनकी मृत्यु हो गई। उन्होंने भू–स्वामियों और ब्रिटिश शासकों के दमन और शोषण के खिलाफ आवाज उठाई। ब्रिटिश शासक आमतौर पर भू–स्वामियों का पक्ष लेते थे। आज मुंडा और अन्य जनजातीय लोग बिरसा को भगवान मानते हैं। बिरसा ने अपने समुदाय के सदस्यों को प्रेरित किया और उनमें क्रांति की मशाल जलाई, उनके साथ जनजातीय वीरांगनाओं का योगदान अविस्मरणीय है।

मंगरी ओरंग, भारत के स्वाधीनता आंदोलन की प्रारंभिक महिला शहीदों में एक थीं। वे असम की रहने वाली थीं और चाय बागानों में काम करती थीं। मंगरी ओरंग को मालती मेम के नाम से भी जाना जाता है। वे चाय बागानों में अफीम विरोधी अभियान की अग्रणी सदस्यों में से एक थीं। उन्होंने 1921 में असहयोग आंदोलन में भाग लिया और शराबबंदी अभियान में भी स्वयंसेवकों का समर्थन किया था। ब्रिटिश शासन से मुक्ति के लिए उन्होंने संघर्ष में योगदान दिया। वर्ष 1921 में दरांग जिले के लाल माटी में ब्रिटिश सुरक्षाकर्मियों ने मंगरी ओरंग की हत्या कर दी थी।

राजस्थान की भील जनजातिय वीर बाला कालीबाई ने मात्र तेरह वर्ष की आयु में अपने समुदाय पर विदेशी आक्रांताओं के अत्याचार और शोषण का विरोध किया। उनका जन्म ग्राम रास्तापाल, डूंगरपुर, राजस्थान में हुआ था। उन्होंने गांव के शिक्षक पर अत्याचार करने वाली अंग्रेज पुलिस को ललकारा, पुलिस ने गोली दाग कर कालीबाई की हत्या कर दी। अपनी धरती और समाज के लिये कालीबाई का बलिदान प्रेरणा पुंज बन गया। भारत की आजादी के कुछ महीने पहले 19 जून, 1947 की घटना के दिन काली बाई अपनी माता नवलबाई, होमलीबाई, लाली बाई गमेती, नानीबाई कटारा और मांगीबाई आमलिया के साथ जंगल में भैंसों को खिलाने के लिये केसू (खांखरा) के पत्ते काटकर लाने के लिये गयी थी। पत्तों के भारे (गट्ठर) सिर पर लेकर आ रही थी कि उनके कानों में ढोल बजने लगे, लोगों के चीखने–पुकारने की आवाज सुनायी दी। टेढ़ी–मेढ़ी पगडंडियों पर वे उतावले डग भरती हुई अपनी पाठशाला की ओर बढ़ने लगीं। आगे आकर उन्होंने देखा कि पाठशाला के मैदान में हाहाकार मचा है। कोई चीख–चिल्ला रहा है, कोई बिलख रहा है और कोई रो रहा है। वातावरण एकदम गमगीन है। रास्तापाल गांव में भील नेता नानाभाई खांट ने

विद्यालय प्रारंभ किया था, जिसे बंद कराने के लिए मजिस्ट्रेट के आदेश से पुलिस और फौजी सैनिकों ने नानाभाई तथा अध्यापक सैंगा भाई को मारना शुरू कर दिया। उनसे बार–बार पूछा गया कि पाठशाला कब बंद करोगे। उनके ना कहने पर बंदूक के कुंदों से बुरी तरह घायल कर दिया गया, फिर बंदूकों के प्रहार से नाना भाई बाहर खेत में गिर गए और वहीं चल बसे। विद्यालय में पढ़ाने वाले शिक्षक सेंगाभाई को अंग्रेजों की फौज गाड़ी के पीछे बांधकर घसीट रही थी। फौजियों की गाड़ी सेंगाभाई को लेकर आगे बढ़ रही थी। कालीबाई के हाथ में हंसिया थी। वह अथाह भीड़ को चीरती हुई बिजली की तरह आगे दौड़ी और कहा, दुश्मनों, मेरे गुरुजी को कहां ले जा रहे हो। एक सिपाही ने दहाड़कर कहा, आगे मत बढ़ो अन्यथा गोली मार दी जायेगी। काली बाई तूफानी गति से आगे बढ़ी, गुरुजी से बंधी रस्सी अपने हाथ में पकड़े हंसिये से काट दी। गुरुजी बच गये परंतु खून के प्यासे सामंती फौज के एक सिपाही ने कालीबाई की छाती में गोली दाग दी। काली अपने गुरु की रक्षा, शिक्षा की ज्योति जलाने और मातृभूमि के लिये 19 जून, 1947 को बलिदान देकर अमर हो गयी। उनकी उम्र मात्र तेरह वर्ष थी, परंतु उसका उत्सर्ग बहुत बड़ा था। शिक्षा की ज्योति को प्रज्वलित रखते हुए सामाजिक चेतना को जाग्रत करने के लिए एक साथ भील नेता नानाभाई खांट और भील बालिका कालीबाई शहीद हुए थे, वह अकारथ नहीं गया। आज स्वतंत्र भारत में नवचेतना के साथ भील जनजातीय समुदाय शिक्षा और राष्ट्रनिर्माण में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है।

हेलेन लेप्चा तत्कालीन सिक्किम राज्य की महान महिला स्वतंत्रता सेनानी थीं। 1902 में दक्षिण सिक्किम के असंगथांग के पास संगमू में अचुंग लेप्चा की तीसरी संतान के रूप में जन्मी हेलेन का परिवार शिक्षा और रोजगार के बेहतर अवसरों की तलाश में पश्चिम बंगाल के कुर्सिओंग में प्रवास कर गया था। लेप्चा जनजाति से सम्बद्ध हेलन लेप्चा (साबित्री देवी) महात्मा गांधी की अनुयायी थीं। 1920 में बिहार की बाढ़ के दौरान हेलेन लेप्चा को प्रसिद्धि मिली, जहां राहत कार्य में उनकी समर्पित सेवा महात्मा गांधी के ध्यान में लाई गई, गांधीजी ने न केवल उनसे मुलाकात की और उनकी प्रशंसा की, बल्कि उन्हें साबरमती आश्रम आने के लिए भी आमंत्रित किया। असहयोग आंदोलन के चरम पर होने के दौरान, साबित्री देवी ने वर्ष 1921 में कलकत्ता में झरिया कोयला क्षेत्र के हजारों मजदूरों की एक विशाल रैली का नेतृत्व किया, जिसमें महात्मा गांधी कई अन्य अनेक प्रख्यात स्वतंत्रता सेनानी उपस्थित हुए। लोगों पर उनके प्रभाव से अंग्रेज बहुत असहज रहते थे। उन्हें गोली मार कर घायल किया गया, कैद किया गया और प्रताड़ित भी किया गया, लेकिन उन्होंने अपने उत्कट साहस को नहीं छोड़ा। 1939–1941 में उन्होंने अपने पति के साथ नेताजी सुभाष चंद्र बोस का सहयोग किया। उस समय नेताजी को जर्मनी भागने में भी मदद की, जब वह घर में नजरबंद थे। उन्हें स्वाधीनता संघर्ष में अतुलनीय योगदान के लिए 1972 में ताम्र पत्र से सम्मानित किया गया।

सन् 1930 के नमक सत्याग्रह में अनेक महिलाओं ने अपना योगदान दिया था। उस समय खूँटी के टाना भगतों की सभा में आधी से ज्यादा संख्या महिलाओं की थी। सन् 1930 के दशक में सुशीला सामद या सुशीला सामंत (7 जून, 1906–10 दिसंबर 1960) ने स्वतंत्रता आंदोलन में अविस्मरणीय योगदान दिया। वे स्वतंत्रता आंदोलनकारी के साथ हिंदी की पहली भारतीय आदिवासी कवयित्री, पत्रकार और संपादक हैं। मुंडा आदिवासी परिवार 7 जून, 1906 को जन्मीं सुशीला जी ने कविताएँ लिखने के साथ–साथ महिलाओं में शिक्षा और जागृति के लिए महिला समिति का गठन किया था। बाद के वर्षों में उन्होंने साहित्यिक–राजनीतिक पत्रिका चाँदनी के प्रकाशन–संपादन की भी जिम्मेदारी ली। उन्होंने हिन्दी में विदुषी की डिग्री हासिल की थीं। वे महात्मा गांधी की सहयोगी जनजातीय महिला स्वतंत्रता सेनानी थीं। सुशीला सामद झारखंड के पश्चिमी सिंहभूम के चक्रधरपुर इलाके की रहने वालीं थीं और उन्होंने बनारस के प्रयाग महिला विद्यापीठ से हिंदी की पढ़ाई की थी। झारखंड की धरती पर पहले भी ऐसी बेटियां पैदा हुईं, जिन्होंने कई क्षेत्रों में एक साथ काम किया। वह भी तब, जब इस क्षेत्र में कोई विशेष सुविधा नहीं थी। एक ऐसी ही बेटी थीं सुशीला सामद, जो देश की पहली

जनजातीय हिंदी विदुषी बनीं। स्वतंत्रता आंदोलन में उन्होंने बढ़–चढ़कर हिस्सा लिया. बापू के नमक सत्याग्रह के दौरान वे उनकी प्रमुख आदिवासी महिला सुराजी थीं और उन्होंने क्षेत्र की अनेक महिलाओं को संगठित किया। 12 मार्च, 1930 को जब बापू ने नमक सत्याग्रह (डांडी मार्च) की शुरुआत की, उस समय झारखंड क्षेत्र की आदिवासी महिलाओं का नेतृत्व सुशीला सामद ही कर रहीं थीं। कविता लिखने वाली देश की पहली आदिवासी विदुषी ने देश की आजादी में अपनी भूमिका निभाने के लिए एक मां के कर्तव्य को पीछे छोड़ दिया। अपने डेढ़ साल के बच्चे को छोड़कर वह स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़ीं थीं। उन्होंने सिर्फ हिंदी में ही कविताएं नहीं लिखीं, अपनी मातृभाषा में भी कविताएं लिखीं। उस जमाने के बड़े–बड़े पत्रकार और संपादक भी झारखंड की इस बेटी की कलम के कायल थे। 1934 में सरस्वती पत्रिका के संपादक देवीदत्त शुक्ल ने सुशीला सामद के बारे में लिखा था, सरल छंदों तथा कोमल मधुर शब्दों में भावों को कविता का रूप देने में उन्होंने कमाल हासिल किया है। उन्होंने सामाजिक–सांस्कृतिक और साहित्यिक जिम्मेदारियों को निभाया। वर्ष 1925 से 1930 तक उन्होंने साहित्यिक–सामाजिक पत्रिका चांदनी का संपादन और प्रकाशन भी किया। वर्ष 1935 में उनका एक कविता संग्रह प्रकाशित हुआ था, प्रलाप। इसके बाद वर्ष 1948 में सपनों का संसार नामक कविता संग्रह प्रकाशित हुआ। प्रलाप संग्रह से उनकी कविता ग्रीष्म की कुछ पंक्तियां देखिए, जहां वे दीन की पीड़ा का स्वर प्रकट कर रही हैं–

करने अब आए क्यों दग्ध,
बरस रहा है हृदय अपार?
या दीनों का हाहाकार,
उड़ता है होकर चीत्कार।।
आज बढ़ा यों अत्याचार,
हुए व्यर्थ शीतल उपचार।
भवन बन गया कारागार,
तन होता जल जल कर क्षार।।

मणिपुर की महान जनजातीय स्वतंत्रता सेनानी रानी गाइदिन्ल्यू ने ब्रिटिश शासन के खिलाफ विद्रोह का नेतृत्व किया था। उन्होंने अपने जीवनकाल में ब्रिटिश शासन के विरुद्ध निरन्तर संघर्ष किया और देश की स्वतंत्रता के लिए लड़ाई लड़ी। औपनिवेशिक शासन की जड़ों को हिलाने वाला उनका नारा था, हम स्वतंत्र लोग हैं– गोरे लोगों को हम पर शासन नहीं करना चाहिए।

वीरांगना नागारानी गाइदिन्ल्यू का जन्म 26 जनवरी, 1915 को मणिपुर के तामेंगलोंग जिले के लोंगकाओ गांव में हुआ था। उनका संबंध रांगमई (जेलियांग्रोंग) जनजाति से था। यह जनजाति मणिपुर की एक प्रमुख जनजाति है, जिसकी अपनी एक समृद्ध संस्कृति और परंपरा है। यह मणिपुर की विविध सांस्कृतिक विरासत का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। उनके पिता का नाम लोथोनांग और माता का नाम करोतलिन्ल्यू था। बचपन से ही उनके स्वतंत्र, स्वाभिमानी स्वभाव और वीरतापूर्ण कार्यों को देखकर गांव के लोगों को आश्चर्य होता था। तेरह वर्ष की आयु में वे नागा नेता जादोनांग के संपर्क में आयीं। जादोनांग मणिपुर से अंग्रेजों को निकाल बाहर करने में लगे हुए थे। वे मिशनरियों के धर्मांतरण षड्यंत्र का विरोध करते थे और उन्होंने संस्कृति की रक्षा के लिए हरक्का संगठन खड़ा किया, हरक्का का अर्थ है शुद्ध या पवित्र। उनके स्वतंत्रता संग्राम से भयभीत होकर अंग्रेजों ने चार मणिपुरी पान विक्रेताओं की हत्या के मिथ्या आरोप में बंदी करके उन्हें 29 अगस्त, 1931 को इम्फाल में फाँसी दे दी। तब स्वतंत्रता के लिये चल रहे आंदोलन का नेतृत्व मात्र तेरह वर्ष की आयु में बालिका गाइदिन्ल्यू के हाथों में आ गया। स्वतंत्रता संग्राम की बागडोर संभालते ही गाइदिन्ल्यू ने अंग्रेजों को कर देने तथा उनकी नौकरी करने से जनता को मना कर दिया। उन्होंने नागाओं को एकत्र किया और अंग्रेजों के विरुद्ध संयुक्त मोर्चा बना कर एक फौज खड़ी की। सोलह वर्ष की इस बालिका के साथ पांच हजार नागा सैनिक थे। इनकी सेना में महिला सैनिक भी थीं। इन्हीं को लेकर भूमिगत गाइदिन्ल्यू ने अंग्रेजों की नींद उड़ा दी। गाइदिन्ल्यू छापामार युद्ध और शस्त्र संचालन में अत्यंत निपुण थीं। एक तरफ अंग्रेज उन्हें बड़ा घातक मानते थे तो दूसरी तरफ जनता का हर वर्ग उन्हें अपना उद्धारक और देवी मानकर श्रद्धा करता था।

गाइदिन्ल्यू द्वारा चलाये जा रहे आंदोलन को दबाने के लिये अंग्रेजों ने वहां के कई गांव जलाकर राख कर दिये। अंग्रेजों के दमन से लोगों का उत्साह कम नहीं हुआ। सशस्त्र क्रांतिकारी नागाओं ने एक दिन हंगुम गाँव में असम राइफल्स की चौकी पर हमला कर दिया। स्थान बदलते, अंग्रेजों की सेना पर छापामार प्रहार करते हुए गाइदिन्ल्यू ने नागाओं के पौलवा गाँव में बड़ा किला बनाने का निश्चय किया जो इतना बड़ा हो कि उसमें उनके पाँच हजार नागा सैनिक रह सकें। इस पर काम चल ही रहा था कि 18 अप्रैल, 1932 को अंग्रेजों की सेना ने अचानक आक्रमण कर दिया और गाइदिन्ल्यू को बंदी बना लिया। उन्हें 14 साल की जेल की सजा सुनाई गई थी। भारत की स्वतंत्रता के बाद, रानी गाइदिन्ल्यू को उनके स्वतंत्रता संग्राम में योगदान के लिए कई सम्मान अर्पित किए गए। उन्हें 1982 में पद्मभूषण से सम्मानित किया गया था। रानी गाइदिन्ल्यू का निधन 17 फरवरी, 1993 को हुआ था। उनकी मृत्यु के बाद, उन्हें मणिपुर की एक महान नेत्री और स्वतंत्रता सेनानी के रूप में याद किया जाता है। उनके तेजस्वी व्यक्तित्व, अदम्य साहस और निर्भयता को देखकर जनजातीय समाज के लोग उन्हें सर्वशक्तिशाली देवी मानने थे। सन् 1947 में भारतवर्ष में अंतरिम सरकार का गठन हुआ तब गाइदिन्ल्यू को जेल से रिहा कर दिया गया। रानी मां गाइदिन्ल्यू ने मिशनरियों का विरोध किया। अपने समाज की संस्कृति की रक्षा और संवर्धन के लिये उन्होंने जेलियांगराग हरक्का संगठन का सक्रिय नेतृत्व किया। समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करते हुए समयानुकूल परंपरा को स्थापित किया। सन् 1991 में वे अपने जन्म स्थान लुंग्काओ लौट गयीं जहां 17 फरवरी, 1993 को 78 वर्ष की आयु में उनका निधन हो गया। उन्होंने राष्ट्र के साथ धर्म और संस्कृति के संरक्षण से अपनी पहचान को बनाए रखने का आह्वान किया, जो आज भी पूर्वोत्तर राज्यों में प्रेरणा पाथेय बना हुआ है।

स्पष्ट है कि भारतीय इतिहास, संस्कृति और समाज में जनजातीय स्त्रियों का योगदान सदा ही से महत्वपूर्ण और प्रमुख रहा है। वे न केवल अपने क्षेत्र और समुदाय की रक्षा एवं कल्याण के लिए संघर्ष करती आई हैं, वरन आवश्यकता पड़ने पर उन्होंने युद्ध के मैदान में भी अपनी बहादुरी और साहस का परिचय दिया, यहाँ तक कि अपने प्राणों को न्योछावर करने से भी पीछे नहीं हटीं। उनके योगदान ने भारतीय इतिहास के विभिन्न कालखंडों में अत्यंत निर्णायक भूमिका निभाई है। आदिवासी स्त्रियों के संघर्षों का अनवरत इतिहास अद्वितीय और प्रेरणादायक है। पूर्व में चर्चित सभी जनजातीय महिला नेतृत्वकर्ताओं ने अपने अपूर्व साहस, वीरता, नेतृत्व क्षमता और संघर्ष से भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में अद्वितीय योगदान दिया है। उनके बलिदान और संघर्ष को सदैव याद किया जाएगा। जनजातीय महिलाओं का संघर्ष केवल अतीत की बात नहीं है, वे आज भी जल, जंगल, जमीन के साथ अपनी संस्कृति, परम्परा और मूल्यों के लिए सचेत हैं। उनके संघर्ष और वीरता, सर्वोच्च बलिदान और निःस्वार्थ भावना के प्रसंग हमारे इतिहास के महत्वपूर्ण अंग हैं। अनेक जनजातीय रणबांकुरों ने भारत की आजादी के लिए योगदान दिया। उन्होंने जनजाति समुदाय के लोगों को अंग्रेजों के विरुद्ध खड़ा किया और देश के विभिन्न भागों में जागृति पैदा की। यद्यपि हमारा स्वतंत्रता आंदोलन लिखित इतिहास का एक अंग है, परंतु असंख्य ऐसे निःस्वार्थ, साहसी और वीर स्वतंत्रता सेनानी भी रहे हैं, जिनका योगदान उजागर नहीं हुआ या जो अलक्षित हैं।

इन भूले—बिसरे सेनानियों को याद किए बिना भारत के स्वतंत्रता आंदोलन की कहानी को पूर्ण रूप नहीं दिया जा सकता। वस्तुतः भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के बीज आदिवासी विद्रोह में दिखाई देते हैं। जनजातीय समुदाय ने कभी गुलामी स्वीकार नहीं की। स्वाधीनता संग्राम में सक्रिय जनजातीय महिलाओं ने घर और परिवार, जंगल और खेत—खलिहान के कामों के साथ विद्रोह में भी सक्रिय रूप से योगदान दिया। राष्ट्रहित में तत्पर शूरवीर महिलाओं, विशेष तौर पर जनजातीय महिलाओं ने इस देश को आकार देने और बाहरी ताकतों से इसकी रक्षा करने में बहुत बड़ा योगदान दिया है। स्वतंत्रता समर में जनजातीय महिलाओं के श्रद्धामय स्मरण और इतिहास के पुनर्लेखन से संपूर्ण भारत का गौरव जाग्रत होगा। राष्ट्रभक्त जनजातीय महिलाएं सदियों से अपनी संस्कृति और परंपराओं को बनाए रखते हुए, संघर्ष और वीरता की मिसाल पेश करती आ रही हैं, वे आने वाली पीढ़ियों के लिए अक्षय प्रेरणा की स्रोत हैं। •

पता : 407, साईंनाथ कॉलोनी, सेठी नगर,
उज्जैन (म.प्र.) पिन—456010
मो. : 9826047765

उसका फिर से मिलना....

❑ सुनीता अग्रवाल

जिंदगी कुछ दृश्यों का कोलाज होती है। जिंदगी के छूट चुके कुछ दृश्य जो इस वक्त मुझे बेहद याद आ रहे थे। जिंदगी एक अधूरी फिल्म ही तो है, जो पूरी नहीं होती कभी। मैंने अपनी कलाई में बंधी घड़ी पर नजर डाली। सुधा के आने में अभी भी आधा घंटा शेष था। लॉन में चहलकदमी करते हुए कितना कुछ इस बीच मेरे मन से गुजर रहा था।

हमारी दोस्ती की कहानी अलग से क्या कहनी। सुधा को जानने समझने की मेरी अपनी ही सोच से भरा–पूरा एक कोना जिनसे मेरा संवाद निरंतर ही चलता रहता। दूर हो जाने या कर दिए जाने पर जो छूट जाता है,उसे हम शिद्दत से याद करते हैं।

जुड़े रहते हैं मन के भीतरी मूल से। ईश्वर जानता है मैंने अपनी ओर से इस अंतराल को पाटने का भरसक प्रयास किया था। पर हालातों को स्वीकारती हुई मैं खुद–बखुद ही अपनी संवेदनाओं से बाहर निकल आयी थी। समय अपनी समान गति से गुजरता है मगर दर्ज कहीं कहीं ही हो पाता है। कोई भी मौसम हो, समय, तारीख। भीतर किसी क्षण विशेष में जो हम ठहर जाते हैं तो ठहरे ही रह जाते हैं। यह खुद का बनाया हुआ आखिरी पड़ाव होता है। इसके आगे जो होता है वह बेमतलब, बेमकसद होता है। अपनी ही कैद की रिहाई नही होती। तभी गाड़ी के रुकने की आवाज आई। सामने का दरवाजा अंदर की ओर खुला। सुधा के सामने होने की तैयारी तो मैं पिछले चार दिन से कर रही थी, अब बस होना था। एक पल, शायद इतना भी नहीं, वही थी। साठ पार, पर मन उन्हीं अतीत के गलियारों में कुलांचे भरता हुआ, भावातिरेक प्रेम में इतने सालों की बिछुड़न को नकारते हुए हम दोनों एक दूसरे के सीने से लिपट गई थी।

सुधा की आंखों पर सुनहरे फ्रेम का चश्मा, घने लंबे बालों की जगह डाई किये हुए पतले व छीजन भरे छोटे बाल, हल्का भरा शरीर, माथे पर छोटी सी बिंदी, पर वही बोलती हुई खामोश गहरी आंखें और गालों के डिंपल। मेरा हाथ अभी भी उसने पकड़ रखा था। ड्राइंग रूम के सोफे पर बैठते ही बोल उठी।

''कितने सालों बाद, हैं न।'' वह हुलस कर बोली।

''पूरे पैंतीस साल हुए।'' मैं हिसाब लगा चुकी थी।

''सच देखते ही देखते वक्त कैसे बीत जाता है,कितना कुछ बदल गया।'' बदल तो पहले ही चुका था, समय को क्यों दोष देना। कहना चाहती थी पर..।

''चाय बनाऊं, पीयेंगी? तुझे बेहद पसंद है न।'' बरसों बाद मिली इस खुशी के अतिरेक को आत्मसात करने के लिए अकेले रहना चाहती थी कुछ पल मैं। ''कभी थी, अब नहीं.. चल बना दे थोड़ी सी।'' थका सा स्वर था। चाय पीते पीते पूछना चाहती थी ''क्या हुआ?'' पर पूछा,

''तू ठीक तो है न?'' ''हाँ, ठीक ही हूँ, पिछले कुछ साल तबियत ठीक नही रही। और बता,तू तो अब भी वैसी की वैसी ही है।'' मुस्कुरा उठी थी मैं, कितना प्यारा झूठ था।

''तेरे बच्चे?'' उसने पूछा। ''दो है, बेटा और एक बेटी। जिम्मेदारियों से मुक्त हो चुकी हूं। बेटी न्यूयॉर्क में सेटल है और बेटा बंगलौर में।'' ''मतलब बच्चे नीड़ छोड़ गए?''

''हाँ, अब वक्त ही कुछ ऐसा है, जहाँ रहें, खुश रहें।'' मैंने अपनी मजबूरी को आशीर्वाद देना ज्यादा ठीक समझा। ''और तेरे बच्चे?'' ''दो एबॉर्शन हुए, उसके बाद फिर कुछ नहीं।'' सिहर उठी थी मैं, बस उसे देखती रही। सुधा वैसे ही बैठी रही। चुप शान्त सी दूर कहीं अंधेरे में आंखे टिकाए। उसकी आंखों के गिर्द खिंच आये वीरानगी के दायरों की भाषा को पढ़ने की नाकाम कोशिश करती हुई मैं, याद नहीं कब हम एक दूसरे के सामने यूं बैठे हों।

''तेरा कमरा तैयार कर रखा है। हाथ मुँह धो ले चाहे तो थोड़ी देर अपनी थकान उतार ले..तब तक मैं बचा हुआ थोड़ा काम भी समेट लूँ। थोड़ी देर बाद ही इन्हें दिल्ली के लिए निकलना भी है। फिर हम आराम से बात करेंगे।''

विनोद खाना खाकर जा चुके थे। मैंने उसके आने से पहले ही खाना बनाकर मेज पर रख दिया था। अब बस उसका इंतज़ार कर रही थी। सुधा संभलकर सीढ़ी उतर रही थी। बहुत सौम्य और फ्रेश लग रही थी। मैंने बाँह पकड़कर उसे अपने पास बिठा लिया।

''इतना कुछ तूने बनाया, कब सीखा?'' वह छेड़ते हुए बोली। ''तू मिली ही इतने सालों बाद है, खाकर बता कैसा बना है।'' ''इतने प्यार से बनाया है, अच्छा ही होगा। बस मैं ही कहीं खो गयी थी।'' उसके चेहरे पर पीड़ा थी।

कॉफी लेकर हम ड्राइंग रूम में आ गए थे। लॉन की तरफ खुलने वाली खिड़की के सामने। ''तेरा घर बहुत बड़ा है रमा,अच्छे से मेंटेन कर रखा है।'' ''अब शरीर उतना साथ नहीं देता,जितना हो पाता है कर लेती हूं।'' ''तेरा लॉन देखा, काफी हरा–भरा है। मेडिटेशन के लिए अच्छा है।

''तू करती है?'' ''करती थी, पर अब नहीं। वो बड़ा वाला..आम का पेड़ है न?'' ''हाँ, काफी बौरे आती है गर्मी में, पर अब खाने का मन नहीं करता।'' ''तुझे तो बहुत पसंद थे न।'' ''तू जो नहीं थी।'' हम दोनों ही उस पल चुप थे। पता नहीं कहाँ, क्या ढूंढने निकल पड़े थे। ठंड पड़ी नहीं थी सिर्फ अपने आने की सूचना भेज रही थी। पत्ते भी मौसम के स्वागत में फूलों के साथ और भी हरे–भरे होकर निखर रहे थे। आसमान में काले बादल छाए हुए थे। कमरे की चुप्पी का दिमाग में चल रहे कोलाहल से कोई वास्ता ना था।

सुधा ने मेरे कंधे को छूते हुए कहा, ''काश! हम उन खो चुके लमहों को दुबारा जी सकते। क्या पाने के लिए कितना कुछ गंवा बैठी मैं। आज भी अंदर कहीं असीमित खालीपन है जो भरने पर भी कभी भरा ही नहीं।''

''सच, बहुत ख़ास गहरे अमिट खुशनुमा छोटे–छोटे अंश है मेरे पास हमारी खूबसूरत दोस्ती के। जब मिली थी तब लगा था पिछले जन्म में अलग हुई तो इस जन्म में मिली हो।एकदम सोलमेट..पर..।'' मैं एकटक देख रही थी उसे।

''पर क्या?''

''पर बाद में तुम्हारे व्यक्तित्व के नए–नए रंग देखने को मिल रहे थे। क्या से क्या हो गयी थी तुम। हर पल बदलती हुई। तब तुम सिर्फ बताती थी, पूछती कुछ भी नहीं थी और वजह...।'' मेरे अंदर की पीड़ा आक्रोश बनकर फूट पड़ी थी।

''निखिल था न..।'' नज़रे झुक गयी थी उसकी..शून्य की ओर ताकते हुए धीरे से बोली, ''पता ही नहीं चला कब निखिल मेरे लिए इतना ज़रूरी हो गया था कि मैंने तुझे अपने से दरकिनार कर दिया था। तुम्हारा हर वक्त निखिल को लेकर टोकना, डाँटना, सही गलत बताना, ज़रूरत से ज्यादा ख्याल रखना यह सब मुझे भार सा लगने लगा था।

तुमको देखती तो रास्ता बदल लेती, ना मिल पाने पर झूठ बोल देती। कहीं न कहीं पीछा छुड़ाने लगी थी।''

''विश्वास का टूटना बहुत मारक होता है सुधा। नए सम्बन्धों के बनने पर जब पुराने संबंध बर्फ की तरह ठंडे पड़ने लगते हैं तब यह भेद अतीत और वर्तमान के बीच एक पारदर्शी विभाजन रचती है स्वतः ही। शिकायत भी किससे करती तू होकर भी नहीं थी।''

अनायास ही, मैं मौन हो गयी थी। मेरी खामोशी सिसकी में बदल चुकी थी। धनुष की प्रत्यंचा पर चढ़े उन पलों में शब्द कहीं खो गए भाव के प्रबल वेग से। दर्द और पीड़ा से भरी रात जो सालों पहले बीत चुकी थी, उसी रात की पुनरावृत्ति थी शायद। चला गया समय एकदम से जाता कहाँ है,लौटता है बार–बार कुछ इसी तरह।

''पूरे कैंपस के सामने हुआ वह अपमान और शर्मिंदगी भुला नहीं पाई थी। हमेशा पढ़ाई में अव्वल रही। किसी से भी दुश्मनी नहीं थी मेरी। मेरे स्कूल बैग में एग्जाम पेपर का सेट जिसने भी रखा होगा, पता नहीं, आज वह किस हाल में होगा। आखिरी साल था वह मेरे ग्रेजुएशन का। सबकी और खासकर तेरी उपेक्षापूर्ण एवम तिरस्कृत भरी नजरों ने उस पल मुझे तोड़कर रख दिया था जिसे दिल ना तो मान रहा था और ना ही दिमाग समझ पा रहा था। कितना रोई थी मैं गुस्से में, मजबूरी में। हॉस्टल छोड़ते वक्त भी तेरे चेहरे पर कोई प्रतिवाद नहीं दिखा था। कैसी दोस्ती हो गयी थी हमारी। न साथ रहने की गर्माहट और न ही अलग होने की कंपकपाहट। मन सूना हो गया था। थोड़ा वक्त लगा पर खुद को खुद से ही समझाया कि क्या वह इस योग्य है कि मैं इस यंत्रणा से गुजरुं।

सबसे कठिन था अपने टूटे स्वाभिमान के साथ माँ को इस सदमे से संभालना। पापा के बाद मैं ही उनके कमजोर दिल की आख़िरी उम्मीद थी। मेरी पीड़ा खुद न ओढ़ पाने की बेबसी, मेरे चेहरे के भाव पढ़ती नजरे, मेरी साँसों के साथ साँस लेती माँ कुछ महीनों बाद ही.... ।''

बरसों बाद न चाहते हुए भी मेरे ह्रदय में वहीं पीड़ा उभर आई थी। दर्द परत दर परत उघड़ने लगा था। सुधा यूँ हीं सोफे पर निढाल शिला सी बैठी रही। लगा पिछली गलियों में कुछ ढूंढ़ने निकल पड़ी हो।

''मैं डूब गई थी निखिल के प्यार में। क्या पागलपन, ऐसी दीवानगी। शायद उस उम्र में जैसा होना चाहिए था वैसा ही प्यार था वह। निखिल मुझे हासिल करना चाहता था यह बात आखिर तक नहीं समझ पाई थी। खुशी का खंडहर था, जहाँ मैं पहुँची थी अपनी जिद में, सब कुछ अनदेखा करके। यहां तक कि खुद को भी भूल गयी थी। जल्दी में कुछ दिखाई नहीं देता सिवाय गम या खुशी के। वो भी तो अपने होते है। ऐसे खंडहर तक कोई पहुँच भी जाये तो वापसी के सारे रास्ते गड़बड़ा जाते है अक्सर। और फिर तू भी नहीं थी, गंवा चुकी थी तुझे। इसकी सजा खुद को कई टुकड़ों में बांटकर चुकाई है मैंने।'' कितना कुछ कह रही थी उसकी वह खामोश गहरी आंखें।

कहीं कुछ था जो मैं पूछ नहीं पा रही थी या जो कहना चाह रही थी उस पल, उसके लिए उसके चेहरे के भावों की इजाजत नहीं मिल रही थी। सुधा सफर की थकान उतर जाने के बाद भी बेचैन सी थी। मैंने पास आकर पीछे से उसके गले पर अपनी बाहों का घेरा कस दिया था। वह बस हौले से मुस्कुरा दी। मन मस्तिष्क में पता नहीं कितने जोर का तूफान चल रहा था। हम एक दूसरे का सहारा बने बहुत देर तक यूँहीं बैठे रहे।

सब कुछ खत्म होने के बाद भी सब कुछ खत्म नहीं होता। रात जब नहीं कटती तो काटने लगती है, नहीं गुजरती तो रिसने लगती है।

अगली सुबह अपेक्षाकृत ज्यादा हल्की लगी थी। सुधा मुझसे पहले उठ चुकी थी। कॉटन की चौड़े बॉर्डर वाली हरे रंग की साड़ी सुधा पर बहुत फब रही थी। उसके गालों के डिंपल आज भी शर्मिला टैगोर की याद दिला रहे थे। पर आंखें साफतौर पर जागते रहने की चुगली कर रही थीं।

''तबियत ठीक नहीं।'' मैंने बहुत कोमलता से पूछा।

''हाँ री, आजकल दवाई भी बेअसर होने लगी है हर दूसरी चीज की तरह।'' सुधा ने दाएं से बाएं सिर हिला दिया मानो हवा में शिकायत की पर्ची उछाल दी हो।

मैं चुपचाप उसका चेहरा पढ़ने की कोशिश करने लगी। सुधा ने जैसे बात बदलनी चाही।

''तुझे याद है इंग्लिश के पीरियड में जवाब न आते हुए भी कैसे झट से तूने हाथ खड़ा कर दिया था। और तुझसे न पूछकर मैम ने मुझसे पूछ लिया था।''

''हाँ, और न बता पाने पर तुझे बेंच पर खड़ा कर दिया था।''

''दुष्ट कैसे साफ–साफ बच गयी थी तू ,पढ़ाकू के साथ साथ शरारती जो थी, और मुझे चिढ़ाकर दबे मुँह बस हँसे ही जा रही थी।'' झूठी नाराजगी पर बेहद अपनी सी।

''और तेरी हंसी, जब हँसती थी तो रुकने का नाम ही नहीं लेती थी और शकुंतला मैम हर बार तुझे क्लास के बाहर खड़ी कर देती थी।'' कहते–कहते हँस पड़ी थी मैं भी।

''और तू वहाँ भी मेरा साथ देने आ जाती थी।'' मेरा हाथ पकड़ते हुए बोली थी।

''ऐसा नहीं है सुधा, याद कर एनुअल फंक्शन के प्ले में मेरे अच्छे परफॉरमेंस के बावजूद भी जब मीरा मैम ने मुझे सेलेक्ट नहीं किया था तब कितनी बहस करी थी तुमने। नतीजा तुम्हें भी प्ले के मेन लीड रोल से निकाल दिया था उन्होंने।''

''सच यार, कितनी सारी यादें, वो नई–नई बातों को जानने की जिज्ञासा, कच्ची–पक्की उम्र के बेतुके सवाल जवाब, श्रृंगार रस में डूबते उतराते हमारे शर्मीले सुर्ख गाल। अब तो कहानी खत्म होने को है, कितना कुछ बीत गया और अब नाम मात्र की सांसें शेष हैं।''

हम दोनों ही उस वक्त यौवन के सोलहवें बसंत में चहलकदमी कर रहे थे। एकाएक याद करते हुए सुधा पूछ बैठी थी, ''अच्छा यह सब छोड़, बता तेरा लेखन कैसा चल रहा है..., काफी कुछ लिख डाला होगा...चल दिखा अपनी लाइब्रेरी..?''

''तुम्हारे जाने के बाद आत्मविश्वास की कुछ कमी आ गई थी मुझमें, शायद अभी भी है। मुझे शुरू से पता था मैं खो रही हूं यह हल्के अवसाद के लक्षण थे। जब मैंने स्वयं ही खुद को प्राथमिकता नहीं दी तो किसी और को क्या फर्क पड़ता। जब तक वापस पलटती, जिम्मेदारियां निभाते निभाते कई दशक बीत चुके थे। तूने पूछा तो जैसे याद आया वर्ना अब तो लिखना भी भूली बिसरी बात हो चुकी है।''

''और शादी के बाद की तेरी लाइफ कैसी रही ?'' सुधा जानने को उत्सुक थी।

''विनोद वैसे तो बहुत अच्छे है पर शुरुआती काफी सालों तक विनोद पति और पिता से पहले हमेशा से ही आज्ञाकारी और दब्बू बेटे रहे। नौकरी करने के साथ साथ घर संभालने के बाद भी वही रोज के ताने, व्यंग और आरोप। कभी तो लगता जैसे मैं ही दुनिया की सबसे बुरी औरत हूँ। माँजी की कूटनीति और हर दिन की प्रताड़ना मुझे एक अनदेखे कठघरे में खड़ा कर देती थी। बच्चों का मोह न रोकता तो अब तक शायद मर चुकी होती।ष आवाज रुंध गयी थी मेरी..उठना चाहा भी तो सुधा ने हाथ पकड़ कर बिठा लिया था।

''सुधा विचलित हो उठी थी। फिर मेरे ठंडे हो चुके हाथों को अपने हाथों से थामते हुए धीरे से बोली,'' यह सब कुछ असहनीय होता है, बहुत पीड़ादायक। औरत होती है पर कहीं नहीं होती। किसी जादू की छड़ी से गुमा दी जाती है। नंगे सिर, नंगे पांव कड़ी धूप में ताउम्र सफर करती है मगर कहीं भी उसके पैरों के निशान नहीं होते। दुनिया का यह हुनर हैरान करता है मुझे।

निखिल से शादी का वो मीठा गुनगुना सा अहसास। मैं उसमें पूरी तरह से भीग भी न पाई थी कि वह पल आ गया जो नींद से चेतना में आने के बीच आता है। पकड़ना चाहती थी पर वह सुख बहुत कोमलता से हाथ छुड़ाकर खिसक गया। हर रोज जिंदगी जीना भी एक युद्ध ही था, तन का ही नहीं, मन का भी।

जब भी हमारी जिंदगी में प्यार के इंद्रधनुषी रंग भरने लगते तभी उस रंग के ऊपर बदरंगा स्लेटी रंग फैल जाता और हम दोनों के बीच का तार जुड़ते जुड़ते फिर टूट जाता। वह अजीब सा शक्की हो गया था। नया शहर, नए लोग पर उसे मेरा काम करना,किसी से मिलना जुलना बिल्कुल भी पसंद नहीं था। लगता तुम सबसे दूर जैसे किसी अंधेरे कुँए की तह में अकेली बैठी हूँ। मेन्टल डिसऑर्डर की वजह से निखिल आउट ऑफ कंट्रोल हो जाता था। घर की दीवारों के बीच गूँजती मेरी बदहवास चीखें, टूटे फूटे सामान के बीच लहूलुहान मेरी आत्मा। यहां तक की प्रेग्नेंसी के टाइम भी... तभी तो...।

मुझे आज भी निखिल के गुस्से से बेकाबू वो शब्द याद हैं, ''एक बात मेरी अच्छे से अपने भेजे में बिठा लो...तुम बिल्कुल अकेली हो यहां, अपने घर से दूर सिर्फ मैं हूँ तुम्हारी

जिंदगी में। तुमको हासिल करने के लिए मैंने हर मुमकिन कोशिश की थी। और दूसरा कोई भी जो तुम्हारे करीब हुआ तो उसे भी रमा की तरह तुम्हारी जिंदगी से दूर कर दूंगा।''

मेरी सांस अटक गयी थी लगा जैसे अभी अभी भूकंप आया हो, जमीन हिल गयी थी। सुधा की आंखों में कितना कुछ सुलगा, बुझा। उसके मन का अंधेरा दिन में ही गहरा चुका था। मैंने सुधा को कसकर चिपका लिया था। आगे कुछ पूछने की हिम्मत ही नहीं थी।

''रमा, असल मे मुझे किसी भी सवाल का जवाब नहीं मालूम पर दिमाग चलता रहता था निरंतर। धीरे–धीरे सब ठीक हो जाएगा पर समय जितनी तेजी से बीत रहा था उतनी ही तेजी से मैं रीत रही थी खुद में। काश समय रहते निखिल से अलग हो गई होती। उम्र की सरहदें पार करते करते कितने लोग छूट गए। अब सच कहूँ तो मुझे दिन, महीने, सालों के बीतने का कोई इंतजार नहीं। इंतजार है तो बस इंतजार के खत्म होने का। अब तो शेष जीवन नन्हे मुन्ने बच्चों को समर्पित कर चुकी हूं।

जानती हूं तेरा दिल दुखाने में मैंने कोई कसर नहीं छोड़ी थी। ढूंढने तक की कोशिश नहीं की तुझे और जब होश आया तो मेरी अपनी ही दुनिया वीरान हो चुकी थी। लंग्स कैंसर हुआ है मुझे। एक आख़िरी बार मिलना चाहती थी अपनी सखी से।

तेरे बैग में एग्जाम पेपर का सेट रखने वाली कोई और नहीं, मैं ही थी तेरी अपनी सोलमेट। उस दिन जब तूने हमारी भागकर शादी करने की बात सुनकर मेरे पापा को बताने का फैसला किया था। तब तेरे विरुद्ध जाकर मेरा गुस्सा निखिल के सामने फूट पड़ा था। सारा प्लान निखिल का था। उसने जुगाड़ लगाकर वह एग्जाम पेपर का सेट मुझे लाकर दिया था। सच रमा नहीं जानती, यह सब मुझसे कब और कैसे हो गया। मैं तुझे बस अपने से दूर करना चाहती थी पर तेरा बुरा कभी भी नहीं चाहा। हर पल दिल मे एक भारीपन और बेचैनी सी महसूस करती थी।

पर न जाने क्यों आज बड़ा सुकून मिल रहा है। रात दिन भागते हुए थोड़ा ठहरते ही अहसास होता है हम कितना थके हुए हैं। कहीं न पहुँचने के लिए किया गया सफर कितना थका देता है। मैंने खुद को बहुत कम जिया है, मेरी संवेदनाएं खर्च नहीं हुई हैं, बहुत सारा बाकी हूँ मैं। शेष जीवन इस तरह घुट–घुट कर खर्च नहीं होना चाहती। माफ कर दे यार।''

एकदम सन्नाटा छा गया था। सभी शब्द चुक गए। ना माफी मांगने वाले, और ना ही माफ करने वाले। एक खामोशी थी पर संवादों से बोझिल। कहते है वक़्त सब कुछ भुला देता है पर यही वक्त कुछ यादें भुलाने में कितना साथ देता है। क्या सालों बाद भी हम भूल पाते हैं सब?... नहीं... पर हाँ उसकी गहराई, दर्द जरूर कम हो जाता है।

जिस तरह उसके अंदर मैं और मेरे वजूद में वह बची रह गयी है उसी की तलाश में आज हम अपने–अपने अभाव से एक दूजे को भर रहे थें। मैंने चुप्पी की दीवार को सरकाते हुए कहा, ''हाँ, मैं तुझे आसानी से दोष दे सकती हूँ। पर उससे होगा क्या। जो हो चुका उस जमीं को तो छोड़ना ही होगा न। भुरभुरी राख पर लौटकर बहन तू ही धंसेगी। काश उस वक्त भी हम साथ होते। पता नहीं तूने अकेले ही इतना दुख कैसे सहा होगा।''

कभी–कभी कोई घटना, कोई याद, मौसम आपके साथ जुड़ जाती है किसी खुशबू या फिर चोट के साथ कि इंसान उससे उबर नहीं पाता। एक मासूमियत जब तक इंसान के अंदर, उसकी रूह में काबिज रहती है वह जिंदा रहता है। जब यह नहीं होता, वह खत्म हो जाता है। जिंदगी की उठा पटक आपकी सरलता और कोमलता सब कुछ छीन लेती है।

हम वर्तमान में नहीं थे जिंदगी फ्लैशबैक में लुढ़की हुई हाथ से छूटकर पीछे की ओर भाग रही थी। तहखानों में छिपा जा सकता है वहाँ जिया नहीं जा सकता। सबके अपने अपने तहखाने होते है।

जाने का वक्त आ चुका था। एयरपोर्ट जाने के लिए टैक्सी घर के बाहर आ चुकी थी।

''तेरे लिए।'' सुधा ने एक पैकेट देते हुए कहा।

''यह औपचारिकता जरूरी थी।'' मैं अचानक ही असहज हो गयी थी।

''ठीक है, मत ले, तुझ पर अब मेरा अधिकार ही कहाँ रह गया है।'' पैकेट छीनते हुए लगभग वही चिरपरिचित रूठते हुए भाव।

''गुस्सा तो आज भी तेरी नाक पर ही रखा रहता है।'' मैं हँस पड़ी थी।

''तूने बात ही ऐसी कही, खोल कर देख तो।''

''फोटो फ्रेम!!!!''

''हाँ इसे अपने घर के किसी कोने में जगह दे देना।''

आंखें भर आयी थीं हमारी, फेयरवेल की ब्लैक एंड वाइट फोटो जिसमे हम दोनों ने पहली बार साड़ी पहनी थी। लगा यह पल बस यही ठहर जाए। अब बिछुड़ने की सांध्य बेला जो शायद हमारी आखिरी मुलाकात थी। वह एक क्षण और वह एक दृष्टि। सब कुछ बदल गया था।

टैक्सी वाला हॉर्न पर हॉर्न दिए जा रहा था। बहुत सारी बातें, बहुत सी अनकही पीड़ा और बेबसी, छोटी–छोटी खुशियों के बड़े होते पल कितना कुछ बताने को उमड़ा। पर अब आंखें पूरी तरह से धुंधला चुकी थीं और शब्द आसूं बनकर निकल पड़े थे। शायद गले लगकर वह सब कुछ कहा अनकहा हमारे हृदयों में संप्रेषित हो रहा था।

मैं सुधा को इस बार उसी हक से रोकना चाहती थी। इस आवेग को रोकने में मेरी आत्म शक्ति विफल हो रही थी। पैर जम चुके थे। काश वक्त को मोड़ पाती। पर उसका जाना तो तय था।

वह चल पड़ी थी टैक्सी की ओर। उसके रुक जाने से कुछ रुकने वाला नहीं था। आगे की ओर उसके बढ़ते कदम पीछे बहुत कुछ छोड़ते जा रहे थे कदम दर कदम। •

पता : 493, सेठ रामजस लेन, नरही, लखनऊ–226001

मो. : 9236208346

लघुकथा

नज़रिया

❑ डॉ. सुधा मौर्य

''अरी ओ बहू, देख रही कितनी अच्छी बारिश हो रही। ऐसे में ही तो मन करता है पकौड़े खाने का। जरा जल्दी से बनाओ न प्याज वाला। सुमित भी ऑफिस से आता ही होगा।"

"जी मां जी। बनाती हूं अभी।" इसी बीच घर के गेट खुलने की आवाज हुई। "अरे !देखना तो कौन आया इतनी बारिश में सुमित तो अभी नहीं होगा।"

बहू ने बाहर से आकर बताया, "एक भाई बहन है। पोर्टिको में रुके है बारिश से बचने के लिए।" "हे भगवान! तुझे अक्ल भी है कुछ ? तुझे कैसे पता वो भाई बहन है।" "दोनों ने बताया।"

"अच्छा! उन्होंने कहा और तूने मान लिया। जमाना कितना खराब है तुझे पता नहीं। कहीं इश्क–विश्क वाले आशिक हुए तो! बखेड़ा खड़ा हो जाएगा कल को। जाओ जल्दी से उन्हें भगाओ।"

सास–बहू की बतकही के बीच सुमित के पापा बोल पड़े, "अरे भाग्यवान! खड़े रहने दो। अभी बारिश रुकने पर चले जायेंगे. हर बात में गलत ही क्यों सोचती हो।" "बहुत सही सोचते हो न तुम। जमाना मैने देखा है। तुम न जाओ। मैं खुद ही भगा देती हूं। वैसे भी पानी में भींगकर गल तो नहीं जायेंगे।"

"अरे रहने दो भाग्यवान! अभी कुछ देर में खुद ही चले जायेंगे।" "अब चुप रहो। तुम नहीं समझोगे। बहू तू पकोड़े बना। मैं देखती हूँ उन्हें। सुमित भी नहीं आ रहा। कहीं भीग कर बीमार न पड़ जाए मेरा बेटा। भगवान उसकी रक्षा करना बहुत तेज बारिश है।"

बहू अवाक् थी अपनी सास के दोहरे व्यवहार पर और उसके हाथ बेसन के घोल में तेज़ी से चल रहे थे। •

पता : मकान नम्बर 161, सेक्टर 11 बी, वृंदावन कॉलोनी, रायबरेली रोड, लखनऊ 226029

मो. : 9455076255

भरोसा

❑ पूनम मनु

आदिवासी इलाके में खुले उस इंटर कॉलेज के गेट पर पहुंचकर उसने एक गहरी दृष्टि उसके बोर्ड पर डाली और सोचा– 'कितने–कितने संघर्षों से जूझना पड़ा यहां तक पहुंचने के लिए उसे' स्वयं को शाबाशी देने का उसका मन किया। पुलकित सोच में डूबी एक मृदुल मुस्कान उसके मुख पर उतरी ही थी कि किसी विचार ने दिमाग में टहोका सा दिया–

'स्कूल का वार्षिक उत्सव है, कुछ तो नया होना चाहिए।' इसी सोच से घिरा एक वात्सल्यपूर्ण दृष्टि कॉलेज बिल्डिंग के चारों ओर डालते हुए वह भीतर आकर अपनी कुर्सी पर बैठ गया।

'गेम्स के साथ–साथ सभी बच्चों का वह हुनर भी निखरना चाहिए जिसमें इनकी दिलचस्पी हो। ताकि जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा कर पाने में ये सदैव सफल रहें। बाकी तो जिस भी क्षेत्र में जाना चाहें इनकी अपनी इच्छा पर निर्भर करता है।' उसके जीवन का ध्येय अब कुछ और हो गया है।

उसने सभी अध्यापक अध्यापिकाओं को स्टॉफरूम में बुलाकर समझाया कि वे अपनी–अपनी कक्षा के सभी बच्चों के ऐसे अलग–अलग ग्रुप बनाए, जिनकी रुचि हुनर एक जैसे हों। ताकि ऐसे मेंटर्स के इंतज़ाम किए जा सकें।

उसने व्याकुल होकर घड़ी पर दृष्टि डाली– ''ऐसा तो कभी नहीं हुआ कि उसे कभी उसकी प्रतीक्षा करनी पड़ी हो। वही आकर तो कॉलेज खुलवाती है, आज क्या हुआ?'' उसने एक लंबी श्वास भरी और छोड़ी सहसा उसकी नजर सामने खिड़की पर पड़ी तो देखा–

तरलकोंथा के उस इकलौते इंटर कॉलेज की ओर एक गाड़ी धूल उड़ाती चली आ रही है।

देखने की कोशिश की पर धूल का गुबार जब तक छंटता, तब तक कोई उसके समीप पहुंच चुका था।

''शिवम्! वह खुशी से चहक उठा।

''हां, बाबा आपका शिवम्। ये आपका है।'' आगंतुक ने उसके हाथों में मेडल थमाकर उसके चरण छू लिए।

''तुम्हें तो कल आना था बेटा''

''फिर आपको सरप्राइज कैसे देता''

''पगला...

प्रसन्नता के अतिरेक में दो मोटे मोटे आंसू आकर उसकी पलकों पर ठहर गए हैं। वह उसके मेडलों को चूम रहा है।

शिवम् ओलिंपिक मैराथन में गोल्ड मेडल लेकर अपने बाबा के पास लौटा है। इस समाचार के साथ कि कई सरकारी नौकरियों के ऑफर उसके हाथ में हैं। रेलवे ने भी बड़ा पद ऑफर किया है।

यह सुनकर वह झूम उठा है। घंटा भर उसे भर–भर आशीर्वाद देता रहा।

''अच्छा बाबा, मैं घर जाकर फ्रेश होता हूं। आप आज जल्दी आइए।आप आएंगे तो फिर हम अपनी महफिल सजाएंगे''

''ज़रूर, तुम जाओ, हम आते हैं'' उसने मुस्कराकर उसकी पीठ थपथपायी।

उसका सींचा हुआ पौधा (स्कूल) अब वृक्ष बन गया है और डेढ़ वर्ष का शिवम् गबरू जवान। उसकी प्रसन्नता का ठिकाना नहीं। उसने शिवम् को एक अच्छा इंसान बनाया है। यह सोचकर वह तृप्त हो उठता है। उसकी आंखों में वैसे ही सपने हैं और वैसा ही जुनून। जैसे कभी उसकी आंखों में थे। पर उसकी आंखों के सपने दूसरे की आत्मा में चुभते होंगे यह नहीं सोचा था उसने। इतनी सतर्कता ही नहीं बरती उसने कभी । किंतु शिवम... वह तो अलग है। उसके सपनों के लिए तो दुआओं में हाथ उठते हैं। और उसके सपनों के लिए तो...

न चाहते भी उसकी आंखों के आगे पच्चीस वर्ष पूर्व के वे दिन तैरने लगे। दर्शकों से खचाखच भरा वो बड़ा हॉल। और उसमें लगी बड़ी–बड़ी तस्वीरें। उसके कैमरे से निकली तस्वीर के आगे सबसे अधिक भीड़ है। और वह प्रसन्नता से दोहरा हुए जा रहा है।

उसके द्वारा खींची तस्वीर का विवरण दें तो कुछ इस तरह होगा–

सत्रह अठारह वर्ष की एक आदिवासी युवती, घिसे पुराने कपड़ों से देह के आवश्यक हिस्सों को बड़े जतन से ढके, बाएं कंधे से लेकर कमर के दाएं हिस्से तक एक मजबूत झोली बांधे है। उस झोली में समेटे अपने दूधमुंहे बच्चे को अपनी छाती से सटाए है। जो उसका दायां स्तन मुँह में में दबाए एक ओर लुढ़का सा है। जिसके कारण उसका ऊपर का हिस्सा अधिक खुला प्रतीत हो रहा है। लकड़ी के दो गट्ठर, एक मजबूत चौड़े फट्टे के दोनों सिरों पर बंधे उसके सिर पर रखे हैं। जिनका संतुलन साधती वह मातृत्व की चमक मुख पर लिए डामर की नई बनी सड़क, जिसके दोनों ओर चूने की ताजा सफेद पट्टी खिंची हुई थी, पर टूटी चप्पलों में चली आ रही है।

उसके द्वारा खींची गई इस फोटो को इस वर्ष का बेस्ट फोटो अवार्ड मिला है। उच्च स्तर पर हुई इस अंतर्राष्ट्रीय चित्र प्रतियोगिता में विश्व के अनेक देशों के नामी गिरामी प्रतियोगियों ने अपने चित्र भेजे थे। जिसमें उसकी कृति को प्रथम पुरस्कार अनाउंस हुआ।

ये पहला अवसर नहीं था। उसके द्वारा खिंची फोटो को जब पहला पुरस्कार मिला हो। सफलता का ऐसा स्वाद वह पहले भी कई बार चख चुका था। पर इस बार के स्वाद में जो नमक था न, उसने प्रसन्नता के साथ–साथ उसके अभिमान को भी दोगुना कर दिया था। सारी दुनिया उसको अपनी मुट्ठी में नजर आ रही थी। वह अपनी प्रशंसा पर फूले नहीं समा रहा था। चारों ओर से उस पर धन की वर्षा हो रही थी। हर बार की तरह इस बार भी कई बड़े प्रोजेक्ट उसके हाथ आ गए थे। भविष्य की पूरी प्लानिंग उसके मस्तिष्क में सेट हो चुकी थी। भविष्य की इस निश्चिंतता से उसकी आंखों में सर्प जैसी चमक लहराने लगी थी। हर्ष के अतिरेक में वह झूमना चाहता था। किंतु... कुछ था जो उसकी इस प्रसन्नता में बाधा उत्पन्न कर रहा था। पूरी खुशी, पूरी की पूरी उसके भीतर उतर नहीं रही थी। उसने हॉल की ओर देखा।

सभी पुरस्कृत चित्रों को प्रदर्शन हेतु गैलरी में रखा गया था। एक बड़े से फ्रेम में जड़ा उसका चित्र, फोटो गैलरी के बीचोबीच सजा था। जिसके आगे सबसे अधिक भीड़ जमा थी। जिनमें अधिकांशतः वे लोग थे जो उस बेहतरीन फोटो के हर कोण को बारीकी से जांच रहे थे। जो इस क्षेत्र के विशेषज्ञ थे। उन लोगों के जेहन में बस एक ही विचार घूम रहा था, कि किस एंगल ने इस फोटो को अधिक आकर्षक बनाया और सत्य के करीब रखा और किन किन कमियों को इस चित्र में देखा जा सकता था, मगर अनदेखा किया गया। मतलब कि प्रथम पुरस्कार किसी जज से संबंध का परिणाम तो नहीं!

लोगों की प्रतिक्रियाओं को, वह एक ऐसे कोने में खड़ा होकर, ध्यान से सुनने लगा, जहां से वह सबको देख सुन सके। पर उस पर किसी की दृष्टि एकाएक न पड़े।

'रुल ऑफ थर्डस' का बढ़िया प्रयोग हुआ है इसमें। पारंगत छायाचित्रकार इस क्षेत्र के विद्यार्थियों को हर वह रूल समझा रहे थे, जो फोटोग्राफी की प्रथम किताब में हर विद्यार्थी पढ़ता है।

विद्यार्थी चकित थे कि, ''कितनी देर इस तस्वीर के लिए प्रतीक्षा की होगी फोटोग्राफर ने। कितना–कितना एफर्ट लगाया होगा और कितना धैर्य रखा होगा इस तस्वीर को उसकी अपनी ही सच्चाई में, उतनी ही सच्चाई से खींचने में।''

कोई–कोई तो समय के छोरों को ही पकड़ने की चेष्टा में था। समय के जाते किस क्षण में ये नक्श उभरा होगा कि इसी धड़कन पर क्लिक किया कैमरा और इसी पग के उठने पर तस्वीर ली बंदे ने कि सबकुछ एकदम परफेक्ट हो।

''इस फोटो में क्या खूबसूरत चीज है देखने को, जो इसको फर्स्ट प्राइज मिला?'' एक नवयुवती, जो द्वितीय स्थान पर आई फोटो (उड़ते पक्षी और उगते लाल सूर्य) के आकर्षण से बंधी थी, ने उस चित्र की ओर देखकर मुंह बनाया।

उसने लड़की के चेहरे के भावों को देखा और हल्के से मुस्करा दिया।

धनाढ्य वर्ग की उत्साही महिलाएं चित्र की कलात्मकता को लेकर अलग ही चर्चा में व्यस्त थीं। एक ने कहा –

''देखो तो फोटोग्राफर का कमाल, हाथ की एक–एक नस साफ दिख रही है''

दूसरी ने कहा– ''सच यार!''

अपनी वाहवाही को सुन, सुन, वह आनंदित होने की पूरी कोशिश कर रहा था। इसके लिए उसने दाएं हाथ की शुरू की अपनी दो उंगलियों के बीच दुनिया की सबसे महंगी सिगरेट ट्रेजर लक्जरी ब्लैक फंसाकर, जला ली। जिसके लिए कहा जाता है कि इसका एक लंबा कश... आनंद का चरम है, उसकी उंगलियों में फंसी धुआं छोड़ रही थी। इस सिगरेट को वह हमेशा नहीं पीता था। कभी–कभी। जब वह ऐसे आनंद को पूरा का पूरा भीतर सोखना चाहता हो, तब।

'ये तो देखो! यार, ये बच्चे को सरेआम कैसे चलते–चलते दूध पिला लेती हैं।' किसी के आश्चर्य पर वह चौंका। 'मुझे तो इस बेचारी गरीब पर दया आ रही है। कितना बोझ सिर पर है, कितना इसकी गोद में' किसी ने चित्र वाली लड़की से सहानुभूति जताई।

''शिट ! इंडियन वूमेन, हाउ डर्टी इज शी?, दे डोंट इवन हैव प्रॉपर क्लीन क्लोथ्स।'' एक गोरी लड़की घृणा से चित्र को देखकर बोली और आगे बढ़ गई।

अचानक उसका मन सबसे खिन्न हो, किसी अनचिन्ही बेचौनी में घिरने लगा। उसने सिगरेट का एक लंबा कश लिया, लगा उसका स्वाद कसैला हो गया है। उसने एक पल सिगरेट को घूरा। फिर अपने चित्र की ओर देखने लगा।

वहां सब थे। राजनेता, जिनकी उपस्थिति के बिना अब कोई साहित्यिक, कला या सांस्कृतिक आयोजन भव्यता को प्राप्त नहीं होते। धनाढ्य वर्ग, जिनके बिना ऐसी प्रदर्शनियों का कोई महत्व नहीं। उन्हीं की जेब के ढीले होने से पता चलती है, किसी की क़ीमत, कई बार जो कलाकार से बड़ी कृति की हो जाती है। वहां मॉडल थे। जो फोटोग्राफरों की नजरों में आना चाहते थे। वहां वे सब थे जो एक दूसरे पर किसी न किसी तरह निर्भर करते थे। जिन पर बाजार निर्भर करता था। या वे बाजार पर। जो एक दूसरे की आवश्यकता को भली भांति समझते थे। सब थे।

अनायास ही बीती रात की बातें उसके विचारों में उछल कूद मचाने लगीं। ''यार दीपांशु, सब्जेक्ट खूब तलाशता है तू!'' सारे दोस्त बासुरूर उसके द्वारा दी गई दावत का आनंद उठाते हुए, बार–बार उसकी पीठ ठोंक रहे थे। उन सबकी बातें सुनकर दर्प से दिपदिपाते उसके चेहरे पर विजयी मुस्कान खेल रही थी। किंतु विशेष जो मानवीय मूल्यों का बड़ा पैरोकार बनता था, सॉफ्ट ड्रिंक हाथ में लिए, उसकी आंखों में आंखें डालते बोला था–

'मित्रों, जिंदगी का प्रतिनिधित्व करती ये स्त्री कोई सब्जेक्ट नहीं है। यह है, जीवन के सारे अध्यायों से परिपूर्ण एक चलचित्र। जो चित्रपट पर निरंतर गतिमान है। जो फोटो के एंगल देखकर नहीं सीखा जा सकता।'

फिर उसके कान में फुसफुसाया था– 'ये चित्र जिसका है, तूने उसको बताया था कि तू उसे यूं सरेआम शर्मिंदा करने वाला है, या यहां भी किसी के भरोसे का फायदा उठाया तूने?' यूं लगा था, भरी महफिल में उसे नंगा कर दिया है उसने। उसने आंखें तरेरकर कर उसकी ओर देखा तो वह अपनी दार्शनिकता पर उतर आया था।

'दोस्तों, ज़िंदगी के कोण देखने को जीवन में उतरना पड़ता है। जिंदा शव क्या जानें जीवन का असल स्वाद। असल स्वाद जानती है, एक स्त्री जो जीवन को साधने का हर हुनर जानती है। देखो, तुम ही देखो! –

कैसे साधा है इसने जीवन को, संतुलन बनाकर थोड़ा इधर, थोड़ा उधर रख दिया है लकड़ी का गट्ठर, आसान कर लिया है अपना सफर। देखो, छातियों से दूध की टपकती हर बूंद पर है इसके प्यारे बच्चों का अधिकार। धरती है यह, जो सींचती है, अपनी छाती के रक्त से अपनी हर संतान को। पांवों के गतिशील होने पर भी जो रख रही है संतुलन। उठते पग अपना ठिकाना पा ही लेते हैं, देती है सबक। सच्चे ग्रास से बने लहू के कतरों से इसकी देह में झलक रहा है इसके दिन रात का श्रम। अनावश्यक आलस्य इसके जीवन की डायरी के किसी पन्ने में दर्ज नहीं। जीवन के प्रति इसका समर्पण हर कार्य में इसकी निरंतरता बनाए रखे है। देह में शुद्ध देह है। अतिरिक्त चर्बी, छत्तीस प्रकार के भोगों के लिए की चाटुकारिता से उत्पन्न वह रोग है, जो जीवन की गति को मंथर करता है। देह पर उतने वस्त्र हैं जितने की अवश्यकता है। शेष तो विलास है। सत्य से सुंदर कुछ नहीं। सत्यम शिवम सुंदरम। सत्य जो शिव है। शिव जो सुंदर है।जो सुंदर है वह जीवन हैं, ब्रह्मांड हैं, हर जीव है। जीवन एक कांवड़ है, जिसमें श्रद्धा और समर्पण दोनों चाहिए। जीवन के संघर्ष को जितनी सरलता से जिसने हंसकर उठाया है, उसने उतना ही सुख और आनंद का पान किया है। कोई दुनियावी पुरस्कार वह अनुभूति नहीं करा सकता। ये पुरस्कार तो धोखा है। जिसके लिए कई बार आत्मा को मारना पड़ता है।' यहां विशेष ने तिर्यक दृष्टि से उसकी ओर देखा था, अपनी बात जारी रखते हुए।

'जन्म और मृत्यु के जो बीच है, स्त्री उसी को साधती है और लिखती जाती है, वे अध्याय जीवन के जो तुमको पढ़कर भी समझ नहीं आते। सिर और छाती पर कितना ही बोझ क्यों न हो, वह थमती नहीं। थकती नहीं।'

जाते–जाते दोस्तों की सारी महफ़िल बदरंग कर गया था, यह और कह कर–

'तुम सबने केवल 'सब्जेक्ट' देखा। बाकी सब भी यही देखेंगे पर इस फोटो के पीछे की सच्चाई को कौन देखेगा? इस चित्र में कसमसाती भूख नहीं दिखेगी किसी को। न ही चित्र में जिंदगी के मायने दिखेंगे। न कोई देखेगा इसमें उस देश के विकास की तस्वीर, समाचार पत्रों या न्यूज चैनल्स में रोज ऊपर उठती जीडीपी से उस चित्र का मिलान कोई नहीं करेगा। डामर की बनी नई सड़क के दोनों तरफ सफेद पट्टी देखने वाला कोई नहीं, न ही उसके ताजा खिंची होने के अर्थ कोई निकालेगा। ना देखेगा कि खुद्दार इंसान दो वक्त की रोटी के जुगाड़ के लिए कितना संघर्ष करते हैं। इस संघर्ष का उदाहरण देकर उन निठल्ले भिखारियों से, चोरों से, ठगों से, रिश्वतखोरों से, ब्याजखोरों से ये नहीं कहेगा कोई कि इनको देखकर उनको चुल्लू भर पानी में डूब मरना चाहिए। न ही मनुष्यों की ऐसी खेप पर लानत भेजेगा कोई, जो दुनिया का एक तिहाई धन अपनी तिजोरियों में भरकर उस पर सांप की तरह कुंडली मार कर बैठे हैं। अफसोस ! ऐसा कोई नहीं कहेगा।

क्योंकि ऐसा कहने वाले केवल किताबों के पात्र हैं या फिर सिनेमा के। असल में कोई ऐसा नहीं होता जो भीड़ में सही को सही कहे और गलत को गलत।

समझ नहीं आता कि ये पश्चिमी देश ऐसी तस्वीरों को कैसे फर्स्ट प्राइज देते हैं, वे इसमें क्या नैसर्गिक सौंदर्य देखते हैं जिसमें गरीबी की बेइंतहा है और जीवन की सभी असुविधाओं से दूर जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं को जूझते लोग। जिसमें विवशता की पराकाष्ठा है। कहीं इन देशों की भुखमरी और निर्धनता को तो नहीं प्रथम पुरस्कार देते ये लोग, ये संस्थान? अपने सम्पन्न होने का दंभ तो नहीं ये पुरस्कार कहीं।क्या सुंदरता है इसमें जिसमें लाचारगी भरी हुई है। क्या मिलता है तुम जैसे फोटोग्राफर को ऐसी तस्वीरें खींचने में और दूसरे देशों में अपने देश की विपन्नता का प्रचार करने में?'

ओफ! उसकी सारी बकवास सुनकर उसका मन कड़वा हो गया था। उसने विशेष को खेद की दृष्टि से देखा था– ''इसको नहीं बुलाना चाहिए था पार्टी में। बनता है बड़ा आदर्शवादी। पता नहीं, किन आंदोलनकारियों का साथी है। विदेश में रहकर भी ऐसे विचार।''

अचानक उसकी स्मृति में कुछ गूंजा था–

''बाबू साहब, जौन तैं ये गांव के भये औ ये गांव के बच लिखिन बर हमर फोटू चाहता हो त पुल लेवा, भी जितनी। हमर जान लेव। मोला उम्मीद हावय के हमर गांव के लइका के पढ़ई के बेवस्था तको करही। खासकर लरकियां के। हमर कनकी बर...। बाबू साहब बचन दूं!''

'वचन रहा लक्ष्मी, यूं ही नहीं तुमको दिल में बसाया है हमने। तुम्हारे लिए अपनी जान...'

'नई बाबू साहब फेर अइसन बात नइ कहे। कनई हमन ल अकेले छोड़ गे...। हम विधवा हवं, कईसे भी अपन जिनगी काट लेबो। हम तुँहर संग बंधन नइ बना पाही...श वह रो पड़ी थी।

'ओह! ये क्या हो रहा है मुझे।श उसका मन किसी

अपरिचित ग्लानि से भरने लगा। पसीना–पसीना हुआ वह बिना विचारे सबसे नजरें चुराता हुआ, बाहर की ओर तेजी से निकल आया था।

कितना कुछ किया था उसने लक्ष्मी से एक मुलाकात के लिए। आठ नौ वर्ष की उसकी ननद कनकी को चॉकलेट, बिस्किट का लालच दिया। गुड़िया और अच्छे कपड़ों का लालच दिया। मोबाइल फोन पर बात कराने का लोभ दिया। पर काम नहीं आया। पता नहीं कैसे ही लोग थे ये जो किसी प्रलोभन में न आते थे। यूं लगता था शहरी लोगों की हर चतुराई से चोट खाए लोग थे वे सारे। अपने कदम फूंक कर रखने लगे थे। कितनी जुगत भिड़ाई तब समझ में आया ये भी पढ़ लिखकर अपनी किस्मत बदलने की चाह रखते हैं। इसमें गलत तो कुछ नहीं। फिर भी सीधे सादे आदिवासियों को देखकर, उनकी सोच की गहराई में पहुंचकर उसे अचरज तो बहुत हुआ था। और ये भी समझ आया था कि पृथ्वी पर जितनी भी मानव जातियां हैं, वे सदैव अपने जीवनयापन के लिए हर स्थिति, हर परिस्थिति, हर परिवर्तन का सामना करने को तैयार रहती हैं। भले ही राह कितनी ही कंटीली क्यों नहीं हो। वैसे भी तो जब जब जीविका के साधन कम होते जाएंगे, नई तरह की कोशिशें जन्म लेंगी ही लेंगी।

इतना नहीं सोचता था वह। पर पता नहीं, उन दिनों ये कौन से विचार थे जो उन आदिवासियों से मिलकर घेर लेते थे। विशेषतः लक्ष्मी से मिलने के बाद।

उसने दूसरा जाल फेंका था। झूठे प्रेम का। विचित्र बात थी कि अपने लोगों, अपनी संस्कृति और परिवार के प्रति प्रेम और वफ़ादारी उनमें कूट–कूट कर भरी थी।

प्रेम का जाल भी जब काम नहीं आया तब उसने गांव की आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए, गांव के बच्चों को शिक्षित करने की उसकी उत्कट लालसा में एक फोटो के लिए लक्ष्मी को मनाया था। सच में, वह मछली फंस गई थी।

लक्ष्मी की सहमति मिले और वहां के निवासियों की दृष्टि में भी नहीं अखरे इसके लिए एक जुगाड़ अपने प्लान के तहत और बैठाया था उसने। या कहो बैठाना पड़ा था उसे, उसने गांव के एक दो सीधे–सादे बड़े–बूढ़ों और एक दो शौकीन लड़कों/लड़कियों को इधर–उधर की बातें कर भरमा दिया था कि– 'सरकार को अपनी बात समझाने के लिए इन सभी चीजों की जरूरत पड़ती है।' उन सभी के फोटो खींचे, एक दो के नाम वगैरह लिए। फर्जी कागजों पर बेवजह अंगूठे लगवाए, ताकि सबको उस पर भरोसा हो जाए। पर लक्ष्मी... वह जितनी सुंदर थी उतनी ही बुद्धिमान। उसने उस समय को भुलाया नहीं था, जब पहलों पहल, मतलब बहुत पहले कुछ अंग्रेज उनके गांव में फोटो खींच रहे थे– नंग धडंग बच्चों के, मर्दों और औरतों/लड़कियों के तो तब ईसाईयत धर्म के चर्च और स्कूल बन गए थे यहां वहां। बहुत से परिवारों ने धर्म बदल कर उनमें शरण ले ली थी। अब स्कूल वास्ते फोटो खींचने को आया है कोई, तो अब स्कूल ही बनेगा या कुछ और?

पर, भरोसा... बड़ा लुभावना शब्द है, जब कोई छल में प्रेम से कहता है, ''तुम्हें मुझ पर भरोसा नहीं है क्या'' तो सामने वाले के पास सिवाय भरोसा करने के कोई और विकल्प बचता ही नहीं।

''तव ठीक, खींच लेव''

इसके बाद उसने उसके कई फोटो खींचे। पर दिखावे को। असली जो फोटो उसे चाहिए थे, वे तो वह उसको किसी कीमत पर नहीं खींचने दे सकती थी। कई दिनों तक टोह में रहा उसके ऐसे पोज की, जो उसको भी पता नहीं हो। रियल बिल्कुल रियल। ये तो तभी हो सकता था ना जब उसका बच्चा उसका दूध पी रहा हो और वह दुनिया की लोक लाज से दूर हुई, बस अपने में खोई हो। उसको भनक भी नहीं लगने दी उसने और दगा भी दे दी। उस दगा को वह दगा नहीं अपनी चतुराई समझता था। ये काम वह पहले छुपकर करता तो मार डालते वे लोग। घुलमिल गया तो इधर–उधर जाने की छूट मिल गई थी। इसी का लाभ उठाया था उसने। मनचाहा पाने पर वह बहुत प्रसन्न था।

और अब.. जब वह इस फोटो पर उच्च स्तर का अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त कर चुका है, वह प्रसन्न नहीं है। क्यों?

वह शिकारी था। जीत पर खुश होना चाहिए था। पर लक्ष्मी की बड़ी बड़ी आँखें कल से जैसे उसके वजूद से चिपकी हुई हैं। उसकी आंखों में धिक्कार है उसके लिए। साल होने को आया उसने पीछे मुड़कर देखा भी नहीं। बड़े–बड़े वादे करके आया था।

'ऐसे दोस्तों से तो दुश्मन भले' विशेष की आंखों में लक्ष्मी की आंखें दिखने लगीं तो जल्दी–जल्दी सब समेट, भारत लौट आया था वह।

भारत आए भी महीना बीत गया। पर उसको एक पल चौन नहीं था। उसको लग रहा था, घर पहुंचकर उसकी बेचैनी और बढ़ गई।

'जीवन का प्रतिनिधित्व करती... ये स्त्री कोई सब्जेक्ट नहीं है...'

ओफ! देखूं तो क्या है इस चित्र में ऐसा जिस पर विशेष के बच्चे के शब्दों ने मेरा मानसिक सुकून छीन लिया है। देखूं तो...

उसने अपना मोबाईल खोला और अपना फर्स्ट प्राइज विनिंग चित्र ध्यान से देखने लगा। कुछ ही देर में उसके दिमाग में विशेष का कहा एक एक शब्द गूंजने लगा।

आह! उसने कभी इस तरह तो सोचा ही नहीं, कोई भी चित्र देखते हुए। उसे अपने चित्र की परफेक्शन से ही मतलब रहा बस। उसमें जिंदगी का कौन सा रूप है और उस चित्र की व्याख्या करते समय चित्र के कितने अर्थ निकलेंगे, और उनसे कौन से पाठ बनेंगे, तैयार होंगे, इतने सोचने की क्षमता न उसमें है, न उसने कभी कोशिश ही की। उसने कभी यह तक भी नहीं सोचा कि जिसका फोटो वह खींच रहा है, और सारी दुनिया के सामने प्रस्तुत कर रहा है वह इसमें सहज अनुभव करेगी या करेगा? जिस तरह का फोटो लक्ष्मी का खींचकर उसने भरी भीड़ में उसे दिखाया है ये उसके लिए शर्मिंदगी की बात होनी चाहिए या गर्व की? क्या कोई भी स्त्री इस प्रकार की अपनी फोटो लोगों को दिखाना चाहेगी? क्या लक्ष्मी कोई मॉडल थी? एक भोली स्त्री को क्या सरेआम बेइज्जत नहीं किया उसने? और क्या कहता है उसे – सब्जेक्ट!

छी!

उसको कभी यदि पता चला कि धोखे से उसका ऐसा कोई फोटो उसने खींचा है, वो भी अपने स्वार्थ के लिए तो क्या उससे घृणा नहीं करेगी?

गो टू हेल!

ना करें भरोसा। वैसे भी कौन बताएगा लक्ष्मी को यह सब! कैसे पता चलेगा? पता चला भी तो क्या उखाड़ लेगी मेरा।

'ओमन वादा करे के तुहिस हमार गांव के लोगन ल शिक्षा उपलब्ध कराही। खासकर नोनी मन... लरकियन के... बाबू साहेब वादा करव!'

''ओह! क्या करूं?'' सिर का दर्द है कि जाता नहीं। मानों आत्मा में घुन लग गया है। न खाने में स्वाद। न जिंदगी में। डॉक्टरों को दिखा दिखाकर थक गया है।

''कुछ तो किया है आपने ऐसा जो नहीं करना चाहिए था। यानी जो भी सही या गलत आपने किया है। उसे आपका दिल जानता है, मगर दिमाग नहीं मानता क्योंकि ऐसा कुछ भी मानने का संकेत आप उसे नहीं दे रहे। इस कारण आपके भीतर एक सुलगती बेचैनी है। आप एकांत में ध्यान लगाइए और जो किया है उसे स्वीकार कीजिए। इस स्वीकारोक्ति के बाद जो आपका हृदय कहे, वही करिए यही इसका एकमात्र उपचार है। बाकी नींद की गोलियां खाते रहिए, कुछ होने वाला नहीं'' मनोचिकित्सक ने अंततः उसकी दुखती रग पर हाथ रख दिया था।

एक नई उलझन में घर लौटा था। रात में बड़ी उलट–पुलट के बाद आंख लगी थी। स्वप्न में देखा लक्ष्मी की बड़ी–बड़ी आंखें उसको घूर रही हैं निरंतर, उफ! वह उठ बैठा। रात के तीन बजे जाते थे। पसीने से लथपथ वह कुछ सोचता रहा।

भोर में ही उठ गया था। दोपहर को लौटा तो टिकट उसके हाथ में था, लक्ष्मी के गांव का।

पच्चीस बरस बीत गए।

तब का आया, अब तक नहीं जा पाया कहीं।

''क्या सोच में हैं बाबू साहिब?''

एक मीठा सा स्वर कानों में पड़ा तो वर्तमान में लौट आया, देखा सामने लक्ष्मी खड़ी मुस्करा रही है।

''कुछ नहीं लक्ष्मी, बस यूं ही''

''बाबू साहिब अपना बचन पूरा किए तुम! हम जेतना भी तुम्हारा उपकार मानें कम है।'' लक्ष्मी दीपांशु की आंखों में तैरती मछली को देख रही है।

तुमने क्षमा किया, तभी पश्चाताप कर पाया लक्ष्मी। नहीं तो मेरे किए की कोई माफी नहीं थी। तुम्हारा भरोसा जो तोड़ा था मैने। तुम्हारा मुझ पर जो बना रहा वह भरोसे से आगे की चीज है। कहना चाहता है बार बार पर कह नहीं पाता।

दीपांशु के चेहरे पर सुकून की मुस्कान है। लक्ष्मी उसके जीवन के हर अध्याय में लिखा नेह है। जो लक्ष्मी के भरोसे की स्याही से उसी दिन लिख गया था, जिस दिन उसने उसे अपना चित्र खींचने की स्वीकृति दी थी। वह तो अकारण स्वयं को बस झुठलाता रहा था। •

पता : बी–285, श्रद्धा पुरी फेस–द्वितीय, साराधना रोड, कनकेर खरे, मेरठ कैण्ट–250001 (यू.पी.)

मो. : 9012339148

निःस्वार्थ सेवा

❑ डोली शाह

सर्दियों का मौसम था। सूरज की मीठी किरणें रोम–रोम को महका रही थी। छुट–पुट दुकानें भी लग ही चुकी थी। सर्दियों की ठिठुरन में भी दुकानदार अपने डब्बा–डब्बियों से खेल रहे थे।

अचानक एक भरखर युवा महिला, सपाट वदन, गेहुंआ रंग, होठों पर गहरी लालिमा, मोटे–मोटे काजल और लहराता आंचल लिए, सामने से गुजरते देख मानो सब की सिट्टी–बिट्टी गुम हो रही थी। चेहरे की हवाइयां देखते ही बन रही थी।

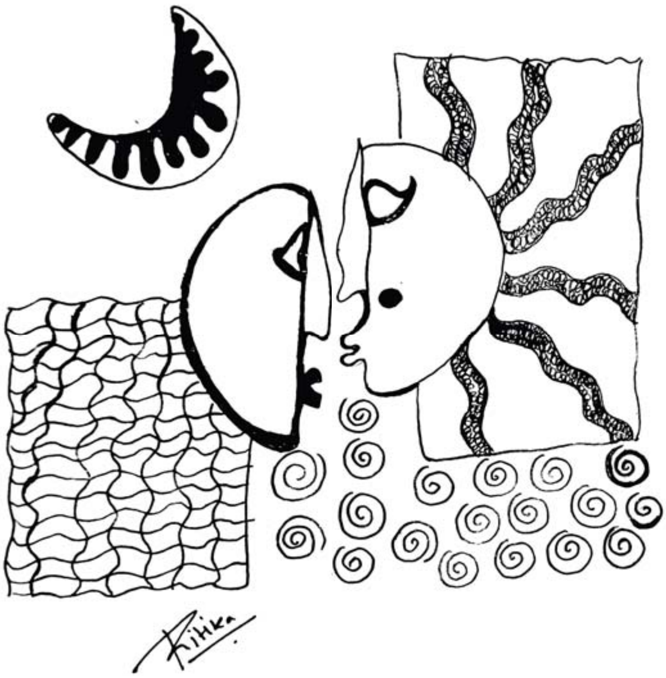

इतने में एक गुमटी पर–अरे भैया, एक पानी की बोतल दे दीजिए, लेकिन पैसे अभी नहीं दूंगी!

''मेरी तो अभी तक बोहनी भी नहीं हुई है कैसे दूं !'' दुकानदार ने झट से कहा कहा।

''दे दीजिए भैया! भगवान आपका भला करेगा!''

बीजू सोच में पड़ गया। लीजिए, बुदबुदाते स्वर में– ''कैसे–कैसे लोग आ जाते हैं, ''मगर शाम तक दे दीजिएगा।''

''हां हां , दे दूंगी।

इतना कहते हैं वह वहां से चली गई। बिंजू गंभीर मन से सोचने लगा। पता नहीं आज बिक्री–बांटा होगा भी या नहीं ! सुबह–सुबह 20 रु. लेकर चली गई।

घड़ी की सुइयां बढ़ती गई। एक रुपए भी नसीब ना हुआ। बिरजू बहुत दुखी हुआ लेकिन अगली सुबह से ही मानो लक्ष्मी स्वयं उसकी दुकान पर पधार गई। सप्ताह में लाने वाली वस्तुएं अब उसे तीसरे

दिन ही लानी पड़ती, जिससे लोगों की नज़रे उसे पर लगी रही।

आसपास के लोग तो उसे व्यंग्य कर कह भी देते, आजकल तो वीजू पर स्वयं लक्ष्मी मेहरबान है। हमें भी ज़रा उपाय बता दो।

अब उसके अंदर भी मन ही मन भाव जगने लगे। बिरजू अब परिवार की हर जरूरतो को बड़ी बखूबी ढंग से पूरा करता, जिससे पूरे परिवार में खुशी की लहर दौड़ गई। सुख–शांति समृद्धि का वास हो गया। अब पत्नी नीलू भी बहुत खुश रहती, लेकिन नीलू की अक्सर अस्वस्थता देख बिरजू थोड़ा परेशान रहने लगा। एक दिन बिरजू को गुमसुम देख नीलू पूछ बैठी।

अब उसके अंदर भी मन ही मन भाव जगने लगे। बिरजू अब परिवार की हर जरूरतो को बड़ी बखूबी ढंग से पूरा करता, जिससे पूरे परिवार में खुशी की लहर दौड़ गई। सुख–शांति समृद्धि का वास हो गया। अब पत्नी नीलू भी बहुत खुश रहती, लेकिन नीलू की अक्सर अस्वस्थता देख बिरजू थोड़ा परेशान रहने लगा। एक दिन बिरजू को गुमसुम देख नीलू पूछ बैठी।

''बात को बदलते हुए, गुड़िया को देख पुराने दिन स्मरण हो गये, जब एक–एक कलम खाता के लिए वो रोती रोती स्कूल जाती थी।'' बिरजू ने कहा।

''सचमुच, वह सोचने से वदन सिहर जाता है।'' नीलू ने कहा।

सामने से एक महानुभाव गेरुआ वस्त्र, हाथों में कमण्डल, मस्तक पर लिपटा चंदन लिए, ''ऊपर वाले के नाम पर कुछ दे दो, बेटा।''

''बिरजू ने दो पल नजर दौड़ाया। 500 रु. के नोट लिए आगे बढ़ा ही था कि आशीर्वादों की लड़ियां देख वह खुद को रोक न पाया और नीलू की तबीयत की सूचना दी।

''इतने में वह कहने लगे, बेटा, तुम चिंता मत करो, वक्त पर दवाइयां खिलाओ, सब ठीक हो जाएगा। तुम्हारे ऊपर तो ऐसा आशीर्वाद है जिसे चाह कर भी कोई तुम्हारा बाल भी बांका नहीं कर सकता।

''बिरजू मन ही मन सोचता रहा, उनसे विस्तार से जानने की इच्छा व्यक्त की।''

''तुमने कुछ वर्ष पहले शायद किसी ऐसी प्यासी को पानी पिलाया था जो बहुत ही प्यासी थी। उसकी रोम–रोम की दुआएं तुम्हें आज सातवां आसमान पर ले गया। बिजू गंभीर हो उनकी बात बड़ी ध्यान से सुनता रहा।

नीलू भी महानुभाव की बातो से बहुत प्रभावित हुई। सौभाग्यवश अगले सप्ताह ही सालगिरह का मौका था।

तौफे के तौर पर नीलू के कहने पर दोनों ने मिलकर इस जाति के लिए एक प्लॉट दान कर दिया, जिससे पूरी कॉलोनी ने उनके फैसले का भरपूर विरोध भी किया, लेकिन दोनों अपने फैसले पर अडिग रहे। वहां न जाने कितनी ही गरीबों को आसरा मिल गया।

माता–पिता के इस सेवा भावना को देख गुड़िया भी गरीबों की सेवा के लिए सदा तत्पर रहती। सेवा भावना मानो उसके हृदय में रक्त प्रवाह बनकर दौड़ता था।

उसकी इसी भावना को देख वेलफेयर ट्रस्ट की ओर से गुड़िया को सम्मानित भी किया गया। सम्मान पाकर पूरी सभा को संबोधित करते हुए गुड़ियां ने सब कुछ का श्रेय अपने पिता को देते हुए उनका मान बढ़ाया, जिससे माता–पिता का सीना चौड़ा हो गया और तीनों मिलकर सम्मान ग्रहण करते हुए सभा को सुशोभित किया। पिता भावनाओं में बह छलछलाई आंखों से ''प्राउड ऑफ यू बेटा'' तो वही गुड़िया चरण–स्पर्श करते हुए आई एम प्राउड ऑफ यू , यू आर मायफादर एंड मदर..... •

पता : पी.एच.ई., पोस्ट–सुलतानी छोरा,
जिला–हैलाकांदी, असम–788162
मो. : 9395726158

पथ की पहचान

❑ सुधा शुक्ला

अर्पिता अपने घर की सीढ़ियों पर उदास बैठी थी। घर की चहारदीवारी के अंदर बनी सीढ़ियों से घर के अन्दर से लेकर बाहर तक का दृश्य दिखाई देता। वह प्रायः यहाँ बैठकर साग–सब्जी काटती, पत्र–पत्रिका पढ़ती, मोबाइल फोन के संदेश पढ़ती और साथ–साथ घर की आहट और बाहर का आनन्द लिया करती।

लेकिन आज अर्पिता का ध्यान न घर की ओर है और न बाहर की ओर। वह तो अपने ही अंदर चल रहे किसी तूफान से जूझ रही है। जो चाहती है, जैसा चाहती है, उसके लिए इतना संघर्ष करना पड़ता है कि उसके अन्दर कितना कुछ मरता जाता है। फीनिक्स पक्षी की तरह वह फर्र–फर्र अपनी राख से उठती है, पर इस बार उससे उठा नहीं जाता। मेधावी अर्पिता जो स्कूल कॉलेज में होने वाले प्रत्येक कार्यक्रम में अग्रणी रहती। जिसके साहस और नेतृत्व क्षमता की भूरि–भूरि प्रशंसा होती, जिसके शब्दकोश में कठिन या असम्भव जैसे शब्दों का अभाव रहता, वह विवाह होते ही क्या से क्या हो गई। उसका वह ओजस्वी, आत्म विश्वास से भरा क्रान्तिकारी रूप न जाने कहाँ खो गया।

धीरे–धीरे असाधारणत्व से साधारणत्व की ओर बढ़ती अर्पिता "आज एकादशी है, आज शुक्र डूबा है, ग्रहण कब लगेगा" और व्रत–उपवास आदि कर्मकाण्डों में" आकंठ लिप्त होती गई। साथ ही अपने पति की सुख–सुविधा के अनुकूलन में अपनी अस्मिता को भूलकर उनकी छाया बनती चली गई। इसी सामन्ती परिवेश में उसके दोनों पुत्रों गौरव और सौरभ का जन्म और पालन–पोषण हुआ। घर–परिवार–पति–बच्चों के लिए अपने सभी सपनों को तिलांजलि देने वाली अर्पिता बड़ी आशा से अपने बड़े हो रहे सुदर्शन सुयोग्य पुत्रों को निहारती, "बस कुछ ही समय में उसके दिन फिरने वाले हैं। उसके बच्चे उसके सारे दुःख–दर्द–कष्ट दूर करेंगे, उसके मन की सुनेगें और उसके मन की करेंगें।"

बड़ा पुत्र गौरव बैंक में पी.ओ. पद पर चयनित हुआ। देश में उसकी तीसरी रैंक आयी। सबकी खुशी का ठिकाना न था। घर में बधाई देने वालों का तांता लग गया और साथ ही उसके विवाह के लिए एक से बढ़कर एक रिश्ते भी आने लगे। अर्पिता को मेघा बहुत पसंद थी। अपनी

क्लासफेलो रमा की बेटी मेघा को वह उसके बचपन से देखती आयी थी और मन ही मन उसे अपनी पुत्रवधू बनाने की साध उसने संजो रखी थी। जैसे ही गौरव बैंक में पी.ओ. के पद पर चयनित हुआ, उसने अपनी क्लासफेलो से बात की। यद्यपि गौरव अपने साथ कोचिगं में पढ़ती एक लड़की मुस्कान के साथ प्रेम की पींगें बढ़ा रहा था। अर्पिता ही नहीं उसके पति भी यह जानते थे और इस बात से वह अपने होनहार पुत्र से अप्रसन्न भी थे। जब तब कहते, "तुमने ही बिगाड़ा है इसे। अपने कर्मों का फल अब तुम्हीं भुगतना। मैं तो कमण्डल लेकर हरिद्वार चला जाऊँगा। समझा लेना अपने नौनिहाल को कि अपनी सीमा में रहें नहीं तो अच्छा न होगा।"

अर्पिता ने ही एक दिन गौरव को बड़े प्यार से समझाया, "बेटा, तुम्हारा जिस आभिजात्य कुल–परिवार में जन्म हुआ है, उसकी प्रतिष्ठा का, मान–मर्यादा का ध्यान रखना तुम्हारा कर्तव्य है। मुस्कान से तुम्हारी यह मित्रता बस मित्रता तक ही सीमित रहे। इसके आगे नहीं।"

बेटे ने आश्वस्त किया, "ऐसा कुछ नहीं है, माँ। आप व्यर्थ परेशान हो रही है। मैं ऐसा कुछ नहीं करूँगा, जिससे आपको कष्ट हो।"

अब तक पुत्र आज्ञाकारी था इसलिए अर्पिता ही नहीं वरन् पतिदेव ने भी उसकी बात पर विश्वास कर लिया। लेकिन इसके बाद से गौरव खिंचा–खिचा सा रहता, अकारण छोटे भाई सौरभ को झिड़क देता। सौरभ भी चिड़चिड़ाने लगा। घर का वातावरण बिगड़ने लगा।

गौरव की दशा को देखकर अर्पिता को आभास हो रहा था कि मुस्कान उसके मन प्राणों में व्यापती जा रही है। समय और विधि के विधान को कौन जान पाया है? फिर भी उसने गौरव की कुण्डली विचरवाई, अरिष्ट के निराकरण हेतु सारे उपाय किए। सोचा कि एक दिन दोनों स्वतः ही दूर हो जाएंगे लेकिन ईश्वर की लीला बड़ी विचित्र होती है। मुस्कान का भी उसी बैंक में पी.ओ. के पद पर चयन हो गया। वह घर में मिलने भी आयी। अर्पिता ने उसे दृष्टि उठाकर देखा तक नहीं। इस तरह की लड़कियां उसे पसंद नहीं जो इस तरह से घूमती–फिरती स्वयंवरा बनी खुद ही लड़के पसंद करें।

उस दिन गौरव पूरे दिन उदास रहा। खाना खाने के समय भी सिर झुकाए बैठा रहा। अर्पिता ने सब गौरव की पसंद की वस्तुएं बनाईं। पालक पनीर, आलू की सूखी सब्जी, सूजी का हलवा। साथ में गर्म–गर्म रोटी। गौरव अनमना–सा दो चार कौर खाकर उठ गया।

क्या बेटा कुछ खाया नहीं, खा तो लिया माँ, ये हलवा तो ले लो ना, गौरव नतमुख अपने कमरे में चला गया। निरुपाय सी खड़ी अर्पिता ने जाना, "बेटा अब पहले जैसा नहीं रहा।"

जीवन भर कोल्हू की बैल से जुटी इस आस में जीती रही कि बच्चे बड़े होकर सारे दुख कष्ट दूर करेंगे पर बच्चे तो स्वयं भटक गए, स्वार्थी हो अपनी पसंद की दुहाई देने लगे। यह तो उसके जीवन की सबसे बड़ा पराजय है। क्या नहीं किया उनके लिए? पर उसकी सारी तपस्या, साधना व्यर्थ हो गई। जिसे गर्भ में रखा, जन्म दिया, पाला–पोसा, आज वही उसकी अवहेलना करते हैं। अन्तर्मन का यह घाव वह किसे दिखाए? अपनी वेदना किससे साझा करे?

गौरव पी.ओ. की ट्रेनिंग के लिए बाहर चला गया। वहीं से उसकी पोस्टिंग प्रयागराज के बैंक में हो गयी और वह वहीं से प्रयागराज चला गया। मुस्कान की पोस्टिगं एटा शहर के बैंक में हुई थी, लेकिन उसने किसी तरह अपनी भी पोस्टिगं प्रयागराज के उसी बैंक में करा ली, जिसमे गौरव पोस्टेड था।

अर्पिता को पता चला तो उस दिन भयंकर तनाव और रोष से उसे नींद नहीं आयी। नवरात्र में उसने चटपट मेघा से गौरव का रिश्ता निश्चित कर दिया और गौरव से कह दिया, "उसे मेघा से विवाह करना ही होगा।" आगे की राह बड़ी कठिन थी। इन्हीं सोचों में वह डूबी थी, तभी द्वार की घंटी बजी। द्वार खोला, देखा मेघा खड़ी थी।

"अरे वाह! आओ, बेटा, अंदर आओ।" खुशी से उमगती अर्पिता मेघा को अपनी बाँहों में भरकर अंदर लिवा ले गयी। "बहुत अच्छा लगा कि मेरी प्यारी मेघा मुझसे मिलने

आयी।" हल्के गुलाबी रंग के चंदेरी सूट में मेघा बड़ी प्यारी लग रही थी। उसका मन मधुर कल्पनाएं करने लगा। एकाएक मेघा ने उसके दोनों हाथ बड़ी कोमलता से थामकर कहा,

"आंटी जी, मुझे आपसे कुछ कहना है।" "हाँ, बोलो बेटा। इधर देखिये आंटी जी पहले आप मेरी ओर देखिए। बताओ बेटा क्या बात है? जानती हैं आण्टीजी, गौरव जी मुस्कान से बहुत प्यार करते हैं। तुम्हें किसने बताया? ऐसी तो कोई बात नहीं है। तुम्हें किसी ने गलत बताया। ईर्ष्या करने वालों की कमी थोड़ी है। नहीं, आंटी जी, मैं जानती हूँ। मैंने भी तो कोचिंग की थी। मैंने देखा है। दोनों एक साथ बड़े अच्छे लगते हैं। खुश रहते है। तो? आप उन दोनों का विवाह कर दीजिए। वह हमारी जाति, कुल की नहीं। "उससे क्या होता है? कल जब गौरव जी खुश नहीं होंगें। आपको पता चले कि मैं भी खुश नहीं। मैं उतनी अच्छी नहीं जितना आप समझती है तो आपको दुःख होगा। क्या अच्छा लगेगा आपको?"

"नहीं, तुम तो बहुत अच्छी हो। कितनी मान–मर्यादा वाली। इतनी सुन्दर।" "आपको कैसे मालूम आंटी जी, थोड़ी देर देखकर ही आपको पता चल गया क्या? हो सकता है कि मुस्कान मुझसे ज्यादा अच्छी हो। आप तो एक बने बनाए ढांचे और फ्रेम को लेकर चली हैं। उसमें जो फिट वही अच्छा।" थोड़ा ठहरकर वह बोली, "जानती है आंटी जी, वह दोनों साथ साथ बड़े अच्छे लगते हैं। एक दूसरे में खोए। मैं तो कभी बात ही नहीं कर पाती, शायद हम दोनों की वेवलेंथ नहीं मिलतीं।

बेटा, हमारे यहाँ विवाह के बाद प्रेम होता है। आंटी अब समय बहुत अलग है। लोग अपने मन को मारते नहीं, दूसरों के लिए नहीं, अपने लिए जीते हैं। मैं भी अपने लिए जीना चाहती हूँ। तुझे तो मैं अपनी पलकों पर बिठाकर रखूंगी। कितने दिन रखेंगी आंटी जी? तब तक जब तक मैं हूँ, अपनी बात अधूरी छोड़कर कहा और आप रखेंगी भी तो गौरव तो मुझे नहीं रखेंगें। मम्मी बताती है कि आप पूरे कॉलेज में छाई रहती थी? क्रान्तिकारी भगत सिंह का रोल आपने किया तो आपके ओजस्वी रूप की प्रशंसा बहुत हुई। अब कहाँ है वह रूप?

अर्पिता अवाक् देखती रह गयी "अच्छा चलती हूँ, "कंधे पर अपना बैग डालकर मेघा यह कहते हुए निकल गयी, "आप बहुत अच्छी है। मैं आपको प्यार करती हूँ पर मैं आपकी बहू नहीं बनना चाहती। मेघा के जाने के बाद अर्पिता टूटी लता–सी बिस्तर पर औंधी पड़ी फूट–फूटकर रोती रही। सोचती रही "जीवन भर खोखली रीतियों–परिपाटियों में पिसते–पिसते वह उन्हीं को ध्येय मान बैठी। न स्वयं को विकसित कर पाई, न रिश्तों को बाँध पाई। बस पुरातन की महिमा के गीत गाकर, दोहराकर वहीं अटक गई। वह भी किन चकल्लसो में उलझ गई। भूल गई कि विद्या वही जो मुक्त करे–सा विद्या या विमुक्तये। कामना वही जो सबके सुख की हो–सर्वे भवन्तु सुखिनः।"

अर्पिता उठी, वॉशरूम में जाकर बड़ी देर ठण्डे पानी के छींटों से चेहरे को सिक्त करती रही। प्रकृतिस्थ होकर घड़ी देखी, बेटे के लंच का टाइम है, उसे फोन किया। उधर से गौरव का चिन्तित स्वर सुनाई दिया, "हाँ, माँ, क्या हुआ? आप ठीक हो?" अर्पिता को सीधे–सादे बेटे का सरल भाव मन को छू गया। बोली, "बेटा पूजा की छुट्टियों में घर आ जा।" देखता हूँ माँ छुट्टी मिलती है कि नहीं। और सुनो बेटा, मुस्कान के माँ पिता से कहना कि हम लोगों से मिलने आएं। क्यों मिलवाएगा नहीं उनसे?

माँ–माँ कहते हुए गौरव का कण्ठ अवरुद्ध हो गया। लव यू माँ शाम को बात करुंगा–कहते हुए उसने फोन काट दिया। उमड़ते भावों को बांधने में समय लगा। घर पर आयी खुशी टालकर वह कहाँ भटक रही थी? क्यों अपनी सारी डोरियां औरों के हाथों में थमाकर अब तक वह कठपुतली सी दूसरों के संकेतो पर नाचती रही। बहुत हुआ। अब वह किसी के संकेत पर नहीं नाचेगी। अपने मन–मस्तिष्क की सुनेगी और अपने बच्चों के सुख–कल्याण के लिए, अपने परिवार को सम्भालने के लिए जो उचित होगा वही करेगी।

अर्पिता का चित्त फूल सा हल्का हो गया और वह आने वाले सुखद समय के स्वागत में जुट गई। •

पता : 3/417, विशाल खण्ड–3, गोमती नगर, लखनऊ–10
मो. : 9454414006

मुझे मत रोको

❑ सियाराम पांडेय 'शांत'

मंच साहित्य का हो या राजनीति का, सांस्कृतिक हो या फिर सामाजिक, लुभाता तो है ही। श्रोता और वक्ता दोनों ही इसके प्रति खास आकर्षित होते हैं। एक सुनने को आतुर और दूसरा सुनाने को बेताब। सुनने और सुनाने में बस एक मात्रा की अधिकता और न्यूनता है लेकिन यही अंतर एक को मंचस्थ बनाता है, उसे सम्मानित कराता है तो दूसरे को ताली बजाने को विवश करता है। वैसे दोनों एक दूसरे पर आश्रित होते हैं।

एक दूसरे से प्रभावित होते हैं। एक के बिना दूसरे का काम चलता ही नहीं। श्रोता हों तो वक्ता का जोश चरम पर होता है और न हों तो वह लगभग नीरस सा हो जाता है। यही बात श्रोता पर भी लागू होती है। विचार सरिता का जल काम का हुआ तो वाह–वाह अन्यथा समय नष्ट होने का निराशा गर्त तो उसे सताता ही है।

विकास त्रिपाठी को उन दिनों सभा, सम्मेलनों और गोष्ठियों में जाने की लत गई थी। वे वाराणसी के संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय से आचार्य कर रहे थे। विषय था वेद–वेदांग। कुछ दिनों तक तो ठीक रहा।बाद में नीरसता छाने लगी। एक ही काम करना हो तो व्यक्ति अक्सर ऊब जाता है। विकल्प तलाशने लगता है। मन की प्रसन्नता के नए मौके ढूंढता है। जहां केवल वह हो और उसका आनंद। इसके अलावा कोई नहीं। विकास के साथ भी कमोवेश यही बात थी। इसके लिए वे अक्सर क्लास से भी बंक मार लेते थे। विकास बचपन से ही अध्ययनशील थे। हर परीक्षा में शीर्ष पर रहना उनकी फितरत थी। इसके लिए वे हर संभव कोशिश भी करते थे। काशी पत्रकार संघ, नागरी प्रचारिणी सभा और अग्रसेन कॉलेज के सभागार से उनका रिश्ता बेहद आत्मीय हो चला था। अर्थाभाव में अक्सर वे मैदागिन और गोदौलिया तक का रास्ता पैदल ही नापते थे।अब तो यह नियमित हो गया था।

काशी के तीनों विश्वविद्यालय बीएचयू, काशी विद्यापीठ और संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय भी उन दिनों सांस्कृतिक, साहित्यिक गतिविधियों के बड़े केंद्र थे। ऐसे में जब एक ही समय पर दो अलग–अलग जगहों पर आयोजन होता तो विकास असहज हो उठते। कहां जाएं, कहां न जाएं, यह सवाल उन्हें परेशान किए रहता लेकिन वे बेहद अनुशासित श्रोता थे। मंच पर बोल रहे वक्ता को तो कभी नहीं टोकते, लेकिन जैसे ही मौका मिलता, अपनी जिज्ञासा उसके समक्ष रखते जरूर। उनका मानना था कि वह श्रोता ही क्या जो अपनी बात न रखे।

उनके तर्कसंगत सवालों से वाराणसी की शायद ही कोई ऐसी सभा रही होगी,जिसके वक्ता विचलित न हुए हों। उनके समक्ष 'उगलत लीलत प्रीति घनेरी' जैसे हालात उत्पन्न न हुए हों। मंचस्थ वक्ता उनका चेहरा देखते ही सजग हो जाते और मौका मिलते ही उनसे नजरें बचाकर निकल लेते। पहले तो आयोजक यही समझते रहे कि वक्ता ऐसा समयाभाव की वजह से कर रहे हैं लेकिन जैसे ही उनका मुगालता टूटा, उनके पैरों के नीचे से जमीन खिसक गई। उन्हें पता चल गया था कि सच की चोट सबसे बर्दाश्त नहीं होती। लेकिन, उनकी विवशता यह थी कि उन्हें श्रोता को भी सम्मान देना था और वक्ताओं को भी।दोनों की अपनी अहमियत थी। किसी को भी कमतर नहीं आंका जा सकता था और कदाचित यह देश–काल परिस्थिति के अनुरूप भी नहीं था।

विकास की उपस्थिति कमोवेश हर सभाओं में रहती। ऐसे में मुख्य अतिथि, विशिष्ट अतिथि बहाने से आयोजकों को टरकाने लगे। बाहरी जिलों के विद्वान ही विकल्प बचे लेकिन उनके अपने नखरे होते। आने–जाने और ठहराने का प्रबंध सो अलग। बनारस में यूं तो आयोजक बहुतेरे थे लेकिन आयोजन अधिकतम दीनानाथ पाठक और सुरेश दुबे ही कराते थे। हर तीसरे–चौथे दिन उनके संयोजन में कार्यक्रम होते रहते। सभा–सम्मेलनों की भी अपनी गणित होती है।चंदे से ही विद्वान भी समादृत होते हैं और आयोजक का भी घर चलता है। घोड़ा घास से दोस्ती कर जी तो नहीं सकता।

काशी पत्रकार संघ में आयोजकों की गोपनीय बैठक हुई। इसमें किसी खबरनवीस को भी खबर नहीं दी गई। बात जब अस्तित्व रक्षा की हो तो उसे सार्वजनिक क्यों करना? आयोजक विद्वान थे।रहीम के विचारों से सहमत थे। 'रहिमन निज मन की व्यथा मन ही राख्यो गोय। सुनि इठलैहैं लोग सब बनती न लैहैं कोय।' बैठक करीब दो घंटे चली। घनश्याम शास्त्री बोले कि श्रोता की अपनी मर्यादा होती है। उसका काम सुनना होता है। खुरपेंच करना नहीं। लेकिन विकास त्रिपाठी ने तो सारी मर्यादाएं लांघ दी। क्या जरूरत है, किसी विद्वान को छेड़ने की। रघुवर मिश्र ने तुरंत बात लपक की। सुनो दीना भाई। मंच पर बोलने में अच्छे–अच्छे लोगों की टांग कांपती है। जीभ लड़खड़ा जाती है। मंच पर बोलना सबके वश की बात नहीं है। हम वक्ताओं को प्रोत्साहित नहीं कर सकते तो हतोत्साहित तो न करें। विकास आचार्य कर रहे हैं। आचार्य हुए नहीं है। वेद–वेदांग में क्या रखा है? चालीस–पचास मंत्र रट लिए और हो गए विद्वान। 'अधजल गगरी छलकत जाय।' हमारी बात मानो दीना भाई। विकास को साफ–साफ कह दो। सभा–सम्मेलन में आएं तो केवल सुनें और चले जाएं। ज्यादा काबिल न बनें। एक श्रोता के लिए सबके आनंद से समझौता नहीं कर सकते।

दीनानाथ पाठक बोले कि रघुवर भाई। जिज्ञासा भी तो कोई चीज होती है। उसका गला कैसे घोंट दें। विकास अपनी जगह सही हैं। उनका अपना अध्ययन है। कोई बात खटकती है तो उसका समाधान तुरंत हो जाना चाहिए। अन्यथा वह नासूर बन जाती है। जिज्ञासा का समाधान तो होना ही चाहिए। वक्ताओं को सभा में आने से पहले पूरी तैयारी कर लेनी चाहिए। यही वक्त का तकाजा भी है। घनश्याम शास्त्री तमतमा उठे। उन्होंने कहा कि विकास अगर इतने ही काबिल है तो उन्हें ही बतौर वक्ता बुला लीजिए। सारी खुरपेंच निकल जाएगी। बकार फूट जाए तो कहिएगा। अब बारी दीनानाथ की थी। बोले रहने भी दीजिए। विकास ने कभी किसी श्रोता को मंच पर नहीं टोका और न ही किसी कार्यक्रम में व्यवधान डाला। वक्ता और श्रोता के अपने अधिकार–अपने दायित्व होते हैं। हम कौन होते हैं इसमें दखल देने वाले। रही बात विकास की तो उन्हें कभी बोलते सुना नहीं। यह जानते तो हम भी हैं कि अच्छा वक्ता होने के लिए अच्छा श्रोता होना जरूरी है। विकास को बतौर वक्ता मौका देने का हमारा भी मन है लेकिन रिस्क नहीं ले सकते। वक्ता की एक गलती पूरे आयोजन पर भारी पड़ सकती है। काशी तो ज्ञान–विज्ञान की नगरी है। यहां तो गली–गली विद्वान हैं। अखाड़े के बाहर से पहलवान को दांव बताना और खुद मल्लयुद्ध करना सर्वथा भिन्न होता है। इतना बारीक अंतर तो हम आयोजकों को समझना ही होगा।

सुरेश दुबे ने दीनानाथ पाठक की बात पर सहमति जताई और कहा कि मामला पेचीदा है। इसे बहुत हल्के में नहीं लेना चाहिए। फिर आयोजन क्या, जिसमें नवीनता न हो। नए वक्ता आएंगे तो नए विचार भी आएंगे। नए तथ्य, नई रोशनी के साथ आएंगे। हम आयोजकों को थोड़ी परेशानी जरूर होगी लेकिन कुछ खास चेहरों वाली मोनोपोली तो टूटेगी। यही क्या कम है? हम इसे भगवान विश्वनाथ का आशीर्वाद, उनका इशारा क्यों नहीं मान लेते। वैसे जो कुछ भी हो रहा है। अच्छा ही हो रहा है। आगे भी जो होगा, अच्छा

ही होगा। रघुवर मिश्र तिलमिला उठे। क्या खास अच्छा होगा। आप लोग विकास को ही सभा में आने से रोक क्यों नहीं देते। समाधान फुनगी से नहीं, जड़ से होना चाहिए। न बांस रहे न बांसुरी बजे। दीनानाथ पाठक तपाक से बोल उठे। न तो यह उचित है और न ही काशी की विद्वतपरम्परा के अनुरूप। एक प्रयोग कर सकते हैं कि किसी सभा में विकास को श्रोता वक्ता के रूप में मौका दे सकते हैं। श्रोता अच्छा भी बोल सकता है और सतही भी, इससे कोई खास असर भी नहीं पड़ता। पाठक जी की इस बात पर सभी की मुहर लग गई। रघुवर और घनश्याम भी खुश थे। वे विकास को इसी बहाने बेइज्जत जो करना चाहते थे। अगला आयोजन एकादशी को रखा गया। बतौर वक्ता काशी के तीनों विश्वविद्यालयों के प्राध्यापक आमंत्रित किए गए। उस एकादशी विकास ने गंगा स्नान के उपरांत बाबा विश्वनाथ का विशेष अनुष्ठान किया। आज उनके साथ क्या विशेष घटित होने वाला है, इससे बेखबर वे पहले अपनी क्लास में गए और फिर अग्रसेन कालेज। विषय प्रवर्तन से लेकर अंत तक बेहद लाजवाब व्याख्यान माला हुई। मंच संचालन आज खुद दीनानाथ पाठक कर रहे थे। प्रो. राधारमण शास्त्री के व्याख्यान के बाद उन्होंने कहा कि आज हम आप सुधि श्रोताओं की अनुमति से कार्यक्रम में एक नया प्रयोग करना चाहते हैं। इसके लिए हम क्षमा चाहते हैं। हमारी मंशा है कि श्रोता पक्ष से भी संबंधित विषय पर विचार आए। यह सुनते ही सभा में नीरव सन्नाटा से छा गया। सब सोचने लगे कि अगला वक्ता कौन बनने वाला है? अचानक दीनानाथ पाठक ने विकास त्रिपाठी का नाम लिया। साथ ही यह भी कहा कि विकास जी हमारे हर आयोजन के नियमित श्रोता रहे हैं। उनके उद्‌बोधन से हम धन्य होंगे।

विकास त्रिपाठी रोमांचित हो उठे। वे स्वचालित यंत्र की तरह मंच पर पहुंचे। सर्वप्रथम बाबा विश्वनाथ को प्रणाम किया और फिर शुरू हो गए। यह उनका पहला मंच था। उनके हाथ–पैर कंपकंपा रहे थे। आवाज लरज रही थी लेकिन सरस्वती उनके साथ थी। उनकी वाणी में ओज था। अपनी सरल–सहज वक्तृता के बल पर वे श्रोताओं के दिल में छा गए थे। रघुवर और घनश्याम के उन्हें अपमानित करने के इरादों पर घड़ों पानी पड़ गया था। श्रोतामण्डल ने उन्हें हाथों हाथ लिया था। तालियां बजाकर उन्हें खूब दाद दी थी। उनके विश्वविद्यालय से आए प्राध्यापकों ने भी उन्हें गले से लगा लिया था। दूसरे दिन अखबारों में विकास त्रिपाठी का वक्तव्य प्रमुखता से छपा था। विकास त्रिपाठी ने अपनी यह प्रशंसा बाबा विश्वनाथ को समर्पित कर दी थी। इस सफलता के लिए उनका आभार भी जताया। इस घटना के बाद से विकास की गणना शहर के विशिष्ट विद्वानों में होने लगी थी। उन्हें सभा–सम्मेलनों में प्रमुखता से बुलाया जाने लगा था लेकिन इसी के साथ उनसे जलने वालों की भी तादाद बढ़ गई थी। रघुवर और घनश्याम उनकी हर सभा में अपने ऐसे समर्थक भेजने लगे थे जो सभा के बीच उन्हें हूट कर सकें और वे ऐसा करते भी लेकिन जिसे श्रोताओं का आशीर्वाद हासिल हो, उसका पथ वे रोक कैसे सकते थे? लेकिन घनश्याम और रघुवर भी पूरे घाघ थे। इतनी आसानी से हार कैसे मान लेते।

खतरे में भारतीय लोकतंत्र विषय पर काशी विद्यापीठ में गोष्ठी थी और उसका संचालन घनश्याम के हाथ में था। जब विकास के बोलने का नंबर आया तो वे बीच–बीच में मंच पर फूल रखकर उन्हें संक्षेपण का इशारा करने लगे। वक्ता संचालक के अनुशासन को मानने को विवश होता है लेकिन वक्तव्य को बीच में तो छोड़ नहीं सकते। हस्तक्षेप के पांच पुष्प आ चुके थे। वे विरमित होने का प्रयास भी कर रहे थे लेकिन विषय की मर्यादा उन्हें ऐसा करने से रोक रही थी। संचालक भी इस सत्य से वाकिफ थे लेकिन इसके बाद भी उन्होंने छठा पुष्प उनके सामने रख दिया ।

विकास अत्यंत विनम्र थे, टूटकर किसी से भी बात नहीं करते थे लेकिन आज उनके धैर्य का बांध जवाब दे गया था। उन्होंने मंच से कह दिया कि संचालक जी, मुझे न रोकें। विचारों की इस सरिता को अविरल बहने दें। श्रोता और वक्ता के बीच बांध न बनें। श्रोताओं को भी यह बात अच्छी लगी और साधु–साधु कहकर उसका अनुमोदन किया। घनश्याम तिलमिला कर रह गए। लेकिन करते भी क्या? जब सुनने वाला राजी तो क्या करेगा काजी।

इस घटना की चर्चा काशी में आम थी। घनश्याम जिधर जाते, लोग फिकरे कसते। आइए–आइए संचालक जी कहकर खिल्ली उड़ाते। घनश्याम भी इसे बेहतर समझते लेकिन अपमान का घूंट पीकर रह जाते। जो बोया था, आखिर वही तो काट रहे थे। •

पता : एच.आर.ए.–2,खसरा नंबर–259,
रॉयल ग्रीन सिटी कॉलोनी,
लौलाई, चिनहट, लखनऊ, उत्तर प्रदेश
मो. : 7459998968

गुट्टक

❑ रेणुका अस्थाना

''तुम्हारी तरह हम भी पढ़े–लिखे होते तो दिन भर यूं बावली सी खाली नहीं बैठते। हम भी कुछ पढ़ते, कुछ सुनते। अँग्रेजी न सही हिन्दी में ही पढ़ते ? रामायण, गीता तो पढ़ते ? पर सब बेकार कर लिया...

कुछ कह रही माँ ...

न, कुछ कह नहीं रही। सोच रही कि हम भी तेरे जैसे पढ़े–लिखे होते तो पहाड़ सा ये दिन हथेली पर उठाए नहीं जीना होता। बहुत मुश्किल होता है इस उमर में दिन काटना। वो भी गर्मी का पहाड़ सा.....

"टी.वी. देखेंगी ?"

"वो भी तो समझ में नहीं आता। कौन सी कहानी कहाँ से शुरू होकर कहाँ जा रही है समझ ही नहीं आता ? फिर इतने सारे आदमी–औरत भरे हैं इसमें कि पूछो ही मत। जी घबरा जाता है हमारा। सबकी अपनी ढपली अपना राग।"

यशी ने किताब में बुक मार्क लगा कर किताब बंद कर दी। हंसी आ गई उसे अम्मा की बात पर।

"आपने पढ़ाई क्यूँ नहीं की अम्मा ? क्या आपके टाइम में लड़कियां स्कूल नहीं जाती थीं या पढ़ती नहीं थीं ?"

"पढ़ती थीं पर कम।"

"हम स्कूल जाते थे। हमारे बाबूजी की बहुत इच्छा थी कि हम चिट्ठी लिखने भर का तो कम से कम पढ़ ही लें पर हम ही दुष्ट निकल गए... कह कर माँ खिलखिला कर हंस पड़ीं।

"इसका मतलब आप बहुत शैतान थीं ?" यशी ने हँसते हुए नकली गुस्सा दिखाया।

"शैतानी क्या कहें पर गलती तो किए ही।" आँख सिकोड़ टी.वी. की स्क्रीन देखने लगीं जैसे मन की सारी बातें वहीं बंद हैं जिसे धीरे–धीरे उन्हें निकालना है।

"अम्मा एक टाट (जमीन पर बिछा कर बैठने के लिए) तख्ती और दवात दे के स्कूल भेजती रहीं और हम आधे रास्ते से अपनी सहेली के खेत में जाकर वहाँ बैठ कर गुट्टक खेलने लग जाते थे। गुड्डी–गुड्डा खेलने लग जाते.....

"आप भी गुट्टा खेलती थीं। पाँच गुट्टों से....

"न न न हमारे समय में बावन गुट्टों से खेला जाता था, पाँच से नहीं। सारे गुट्टे जमीन पे धर के एक गुट्टा उछालते और धीरे–धीरे जमीन पर रखे सारे गुट्टे एक जगह से उठा कर दूसरी जगह धर ढेरी बना देते, साथ ही गीत भी गाते जाते...

कुछ पल चुप हो कुछ याद सा करती हैं.... "शायद कुछ ऐसा–

एक बाई बरजन / बावन बरजन

पंच भैया के, अठ नेबुला के

ग्यारह कलाकार के, बारह बेटा बाप के...पूरा नहीं याद है..."

कुछ सही कुछ गलत बोलती हंस पड़ीं। "अब कुछ नहीं याद रह गया..."

"मतलब आपने अपने गुट्टों और गुड़िया के कारण पढ़ाई नहीं की ?"

"मन ही नहीं लगता था......बड़ी कठिन लगती थी पढ़ाई। उस पर मास्टर साहब खजूर की छड़ी बना कर मारते थे। खुली हथेली पर। बहुत तेज चोट लगती थी.....

"कभी कुछ याद आता है पीछे का ?''

"हाँ आता है। बहुत कुछ याद आता है...और भूल भी गया है बहुत....और कुछ याद भी नहीं करना चाहते....

"क्या याद आता है, अच्छा–अच्छा या बुरा भी...

"अच्छा....? अच्छा.... कुछ जिंदगी में था ही नहीं। जो था उसमें कुछ कड़वा था कुछ कसैला। पहले का जमाना आज सा नहीं था यशी ! औरत बस औरत होती थी। हाड़–मांस की काया जिसके साथ रिश्ते तो बहुत जुड़ते थे पर वह किसी रिश्ते से नहीं... अपने बच्चों से भी नहीं।"...

समय, कुछ पल को उनके बीच कटे–फटे धागे के गुच्छे सा उलझ सा गया। समझ ही नहीं आ रहा था यशी को कि कैसे सुलझाए वह इसे ? कैसे रोक दे अम्मा को जो अपनी उँगलियों को अपने शब्दों के साथ एक दूसरे में गूँथ कर ऐंठे जा रही थीं। "माँ... बाबूजी ने पहली रात... मेरा मतलब है पहली बार मुंह देखने पर क्या दिया था"....यशी ने बात बदल दी। अम्मा की गुंथी उँगलियाँ धीरे–धीरे खुलने लगीं। अपनी आँखों को रोप दिया उन्होनें हथेली में।" हमारे समय में ये रसम नहीं थी... या शायद हमारे घर में ही नहीं थी, पता नहीं। उस जमाने में ब्याह के आते ही चूल्हा चौका संभालो, घर परिवार संभालो बस्स...

"और हसबैंड ... मतलब आदमी ?

"कोई अर्थ नहीं उसका.... कहती लेट गईं बिस्तर पर।" उस समय न आज के जैसा पास बैठने का अधिकार था न बात करने का अधिकार और न साथ चलने का। जिंदगी कहीं अपनी थी ही नहीं... किसी औरत की...बड़ा अजीब समय था।"

"फिर इतने... इतने बच्चे! कैसे...?" हंस कर उठ बैठीं " तब साथ चोर की तरह जिया जाता था। दो पहर बीती रात, जब दुनिया गहरी नींद में हो जाए तो आदमी अपने कमरे में जाता था और भोर की अजान से कमरे से बाहर। न शकल दिखे न मन जुड़ पाए। बस देव ने रिश्ते से तन की गांठ बांध दी थी... वही जीवन की भरपाई थी... "मन की गांठ तो कभी खुल ही नहीं पाई ? एक पहर में कोई कैसे जान पाए कि हम क्या चाहते हैं... किसे चाहते हैं ....हमें तो बेदी की गांठ बचाए रखना था...चाहे जैसे।

"ये ठंडी हवा वाला बंद कर दो यशी, हमें ठंड लग रही है।

यशी ने एसी बंद कर पंखा तेज कर दिया। माँ सो गई, गहरी नीद में। शायद जीवन का कोई भार आज उतरा था। यशी माँ के ऊपर चादर डाल कर वहीं लेट माँ की पीढ़ी से लेकर आज तक की पीढ़ी को सोचने लगी–औरत थी कहाँ... .उस जमीन पर, जहां सब उसका था पर कहीं कुछ नहीं या जहां कहीं कुछ मिला भी तो तीन हिस्सा जीवन पार कर ? और आज ! जब लड़कियां अपने कंधे पर अपनी जिम्मेदारी खुद उठाने में सक्षम हैं तो समय कुछ निश्चित ही नहीं कर पा रहा कि कब क्या देना है उन्हें, क्या उनकी विरासत है... बस बांध रहा है उन्हें उनकी ही स्वतन्त्रता के महीन धागे से, जिसकी गांठ बहुत ही आकर्षक होती है।

समय, समाज सब अनिश्चित। कोर्ट हतप्रभ है हर दिन तलाक की अर्जियों का पुलिंदा देख कर।

रेशमी धागा धीरे–धीरे सरकता जा रहा है...

माँ सो गई थी और यशी जाग रही थी बहुत सारी उलझी गुत्थियों में उलझी जिसमें वह भी तो बंधी थी। चुप... अपने आप में जीती। कल भी और आज भी। तभी उसकी आँखों में बावन गुट्टों की ढेरी सामने की जमीन पर लग गई जिसे काँपते हाथों से लेकर नए रेशम से कोमल हाथ एक–एक कर खेल रहे थे... खेल रहे थे...बिना किसी जीत–हार के...अपने–अपने रेशमी धागे में उलझे... •

पता : एल–2, 207 आशियाना आँगन, भिवाड़ी, राजस्थान–301019

मो. : 9982448126

शालोम ब्रू

❑ अनुजीत

धर्मकोट की उस शांत पहाड़ी पर, जहाँ बादल अक्सर चीड़ और देवदार के पेड़ों से लिपट जाते हैं, एक छोटा–सा कैफे था। बाहर एक साधारण–सा बोर्ड टंगा था, 'शालोम ब्रू' । कैफे की खिड़कियों से दिखाई देता हिमालय, मानो जीवन के अनुभवों की एक खुली किताब हो। पहाड़ों की हर परत किसी अध्याय की तरह प्रतीत होती, कुछ हल्के, कुछ गहरे और कुछ रहस्यमयी। जैसे किताबें अपने भीतर अनगिनत कहानियां और ज्ञान समेटे होती हैं, वैसे ही ये पहाड़। हर मोड़, हर घाटी, और हर शिखर मानो जीवन का कोई नया पाठ सिखाने के लिए तत्पर हो।

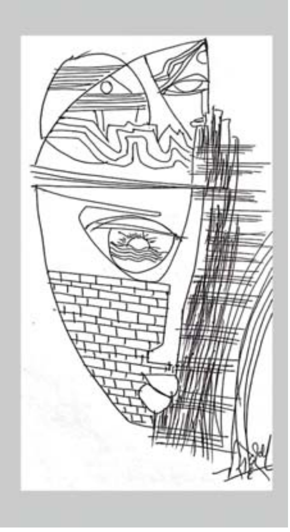

कैफे के भीतर की दीवारें किताबों से भरी थीं, यहाँ वर्ड्सवर्थ, जॉन कीट्स, इलियट, लॉर्ड बायरन, व्हिटमैन, टॉल्स्टॉय, वर्जीनिया वुल्फ, शेक्सपीयर, जेन ऑस्टिन, खलील जिब्रान, टैगोर। किताबों के साथ हल्के संगीत का माहौल था, कभी इजरायली किनोर धुनें, कभी मिडल ईस्ट औद की रहस्यमय गूँज, तो कभी जापानी कोतो की मधुर तान।

कैफे में घुसते ही ताजी पीसी हुई कॉफी की खुशबू सांसों में घुल जाती। गर्म कॉफी के साथ ताजे बेक किए हुए क्वासों और पेन औ चॉकलेट की मीठी महक वहां की हवा में रची–बसी रहती। एक कोने में देसी मसालों से महकता हुआ कैरेट और अखरोट का केक और पिसी हुई दालचीनी के साथ गर्म सॉरडो ब्रेड के लोफ। पास ही एप्पल पाई, चीजकेक और मैकरॉन्स की सजी हुई ट्रे, तो दूसरी ओर टार्ट्स और ब्रियोश बन्स की नरम सुगंध हर किसी को लुभा लेती।

अवंतिका जी, इस कैफे की मालकिन जो करीब उनसठ की उम्र में किसी शांत झील सी लगती थीं। सफेद बाल जूड़े में सहेजे रहतीं, लंबा कद और भूरी सी आँखें, जिनमें एक गहरी थकान सी नजर आती थी। उनकी चाल धीमी थी, मानो वह वर्षों का अकेलापन अपने कदमों में लेकर चल रही हों। वह अपने कैफे को बहुत लगाव से संभालती थीं। उनके हाथों की बनाई ''फ्रेंच प्रेस'' कॉफी यहां की पहचान थी। कभी–कभी वह ग्राहकों के साथ, जिनमें ज्यादातर युवा थे, बैठकर उनके चाय–कॉफी के प्यालों के संग किताबों, संगीत और जीवन पर चर्चा करतीं।

उनके कैफे का हर कोना उनके व्यक्तित्व की तरह सरल, लेकिन गहराई लिए हुए था। कैफे का माहौल ऐसा था, मानो हिमालय के इस शांत कोने में समय ठहर गया हो।

वह लखनऊ से यहां आई थीं। वही लखनऊ, जहां की हवाओं में गंगा–जमुनी तहजीब घुली हुई थी। चौक की गलियों से उठती गुलाबों की खुशबू, रूमी दरवाजे की भव्यता और नवाबी दौर के किस्सों से सजी शामें। जहां मुगलई खाने की खुशबू, गुलाबी चाय और रेवड़ी मिलकर शहर की रूह को मिठास से भर देती थी। लेकिन अवंतिका जी का जीवन इस मिठास से कोसों दूर था। एक तीन कमरों के फ्लैट में उनका पूरा संसार सिमटकर रह गया था। जब पढ़ लिख कर अंग्रेजी की प्रोफेसर बनीं तो पिता का साया सिर से उठ गया और माँ डिमेंशिया से जूझ रही थीं। अवंतिका जी इकलौती संतान थीं। उनकी पूरी जिंदगी माँ की सेवा में गुजर गई, बाद में माँ भी चल बसी और अवंतिका जी अकेली रह गईं।

उनके भीतर एक और जीवन छुपा था, सपनों से भरा, संभावनाओं से लबालब लेकिन वह जीवन उनके भीतर घुटता रहा। अपनी महत्वाकांक्षाओं और इच्छाओं को उन्होंने इस कदर दबा दिया था कि मानो उनका अस्तित्व ही मिट गया हो।

लखनऊ की मिट्टी ने अवंतिका को बहुत कुछ दिया था। उनके विद्यार्थियों का निश्छल प्रेम, संगीत और लेखन के प्रति अद्‌भुत लगाव। उनके व्यक्तित्व में जो सादगी और गहराई थी, वह इसी शहर की देन थी। अंग्रेजी साहित्य के अनुवाद में उनका योगदान उल्लेखनीय था।

एक बार उनके एक सहकर्मी ने उनसे बड़े ही सहज भाव से पूछा था, ''अवंतिका, आप शादी क्यों नहीं करतीं?''

अवंतिका ने हल्की मुस्कान के साथ जवाब दिया था, ''कुछ लोग अकेले ही पूरे होते हैं।''

यह जवाब सुनने वालों को गहराई से सोचने पर मजबूर कर देता था, पर उनके भीतर का सच इससे बहुत अलग था। वह जानती थीं कि यह पूरा होने का एहसास महज एक आवरण था। उनकी माँ के जाने के बाद, लखनऊ के उस छोटे से फ्लैट में वह अकेली रह गई थीं। कमरों का सन्नाटा उनकी आत्मा के भीतर तक गूंजने लगा।

कभी–कभी रात के अंधेरे में, जब पूरा शहर गहरी नींद में डूबा होता, वह अपनी डायरी लेकर बैठतीं। पन्नों पर शब्द उतरते जाते, जैसे वे उनका साथ निभाने आए हों। पर वह जानती थीं, शब्दों का सहारा स्थायी नहीं होता। उनका अकेलापन कभी–कभी इतना गहरा हो जाता कि वह खुद को एक अनजान शून्य में तैरते हुए पातीं। अवंतिका जी का जीवन उस अधूरेपन की दास्तान था, जो बाहर से संपूर्ण दिखता था, पर भीतर से एक खामोश पुकार बनकर रह जाता था।

स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के बाद जब लखनऊ में रहना असंभव हो गया, तो उन्होंने सब कुछ बेच कर हिमाचल में धर्मकोट का रुख किया, क्योंकि वो अक्सर यहां आती रहीं थीं, कभी स्टूडेंट्स के साथ या कभी अकेले। यहाँ उन्होंने लोकल दोस्तों की सहायता से ''शालोम ब्रू'' कैफे खोला, जिसका अर्थ था शांति की कॉफी। अवंतिका जी ने दो तिब्बती सहायिकाओं को रखा, ताशी और पेमा, जो न सिर्फ अपनी मेहनत से कैफे को सजीव रखती थीं, बल्कि दोनों की खासियत थी विदेशी बेक्ड चीजों में महारत। ताशी के हाथों में जैसे किसी जादू की छड़ी हो, जो मैडेलीन और कैनले को बिल्कुल वही स्वाद देती थी, जिसे लोग यूरोप में खाते हैं। पेमा की बेकिंग में ताजगी और सादगी का संगम था। उसकी तैयार की हुई टार्ट टैटिन और अमारेती कुकीज हमेशा ताजगी से भरी होती थीं। अवंतिका जी को गर्व था कि उसने इन दोनों के साथ मिलकर अपने कैफे को न केवल लोकल संस्कृति से जोड़ा, बल्कि अंतरराष्ट्रीय फ्लेवर भी वहाँ लाया.

यह जगह कॉफी और साहित्य प्रेमियों के लिए एक ठिकाना थी। कैफे में आने वाले लोग अक्सर किताबें पढ़ते, जीवन पर चर्चा करते।

अवंतिका जी का जीवन वहीं ठहर गया था। वह सुबह कैफे खोलतीं, किताबों की अलमारियों को ठीक करतीं और शाम ढलते ही खिड़की के पास बैठ जातीं। जब बाहर पहाड़ों की पगडंडियाँ अंधेरे में खो जातीं, ताशी और पेमा कैफे बंद करके चली जाती तो अवंतिका जी वापस अपने कमरे में आ जाती, जो कैफे के ऊपर था।

दिसम्बर एक ऐसी ही शाम अवंतिका जी काउंटर के पीछे बैठी, पाब्लो नेरुदा की प्रेम कविताओं की किताब में खोई हुई थी। इजरायली संगीत बज रहा था। दरवाजा खुला, और भीतर एक लंबा, दुबला–पतला लगभग साठ

पैंसठ वर्ष का व्यक्ति दाखिल हुआ। सफेद बाल हवा से बिखरे हुए थे, कमर थोड़ी झुकी, तीखी और सीधी नाक लेकिन उसकी आँखों में ऐसा गहरापन था जो पहली नजर में ही खिंचाव पैदा कर दे।

उसने साधारण–सी हिंदी में पूछा, ''क्या यहाँ बैठ सकता हूँ'' अवंतिका जी ने चौंककर सिर हिलाया। वह विदेशी था, लेकिन उसकी हिंदी आत्मीय और सहज थी। ''अच्छी जगह है,'' उसने मुस्कुराते हुए कहा। ''क्या इसे आपने बनाया है?'' ''हाँ,'' अवंतिका ने हल्की मुस्कान के साथ जवाब दिया। ''मैं डैनियल हूँ,'' उसने हाथ जोड़ते हुए कहा, ''इजराइल से, लेकिन अब तो भारत मेरा घर है। हिमालय और आध्यात्म ने मुझे यहाँ रोक लिया है।''

अवंतिका जी डैनियल को ध्यान से देख रही थीं, उसका व्यक्तित्व उसके यहूदी होने की पहचान करवा रहा था। डैनियल की नजर कोने में रखी किताबों की अलमारी पर पड़ी। वह धीरे–धीरे वहाँ गया, जैसे किसी पुराने मित्र से मिलने। उसकी उंगलियाँ किताबों के पन्नों को छूते हुए ठहर गईं। उसने मुड़कर पूछा, ''क्या मैं इसे पढ़ सकता हूँ?''

अवंतिका ने हामी भरी, लेकिन उनकी नजरें डैनियल के चेहरे पर टिक गई थीं। एक अजनबी होकर भी वह इतना परिचित क्यों लग रहा था?

डैनियल : ''यहाँ कैफे में कोई इजरायली संगीत चल रहा है लेकिन कोई वहां की डिश भी हो, तो बताइए।''

अवंतिका, ''जैसे हलवा, बाबका या बोरका?''

डैनियल : (चौंककर) ''आपने बोरका का नाम लिया? अद्‌भुत! क्या आपके पास है?''

अवंतिका : (हंसते हुए) ''जी, है।''

डैनियल : (गर्मजोशी से) ''बस एक कॉफी और बोरका।''

अवंतिका ने हल्की मुस्कान के साथ उसकी पसंद का ध्यान रखते हुए कॉफी और ताजा डिश टेबल पर रखवा दी। दोनों में खूब बातचीत हुई। डैनियल ने अपनी उंगलियों में कॉफी के कप को थामा, और पहली चुस्की लेते ही उसकी आँखों में एक अपरिचित चमक उभरी और उसने अवंतिका जी को ध्यान से देखा। अवंतिका जी ने यह देख, चुपचाप अपनी दृष्टि खिड़की के पार मोड़ ली। दोनों के बीच की बातचीत सहज, निश्छल, और अप्रत्याशित थी। डैनियल की आवाज में कहीं दूर की वादियों की गूँज थी और अवंतिका जी के शब्दों में उस घाटी की चुप्पी, जो उसे सुन रही थी। वह उसकी कहानियों को सुनती रहीं। सुदूर देशों की बातें, समुद्रों के विस्तार, और उन जगहों का जिक्र, जिनका रंग और रूप उन्होंने केवल कल्पना में महसूस किया था। सारी शाम में डैनियल तीन कप कॉफी पी गया। तीसरे कप के बाद वह हँसते हुए बोला, ''आपकी कॉफी में ऐसा क्या है, जो मैं खुद को रोक नहीं पा रहा?''

यह पहली शाम थी–बातों की शुरुआत का पहला स्वाद। डैनियल की आँखों में उनकी तरफ देखने का ढंग, उनकी हर बात को सुनने का धैर्य, और उसके उत्तरों में उस खास ठहराव का स्पर्श... यह सब अवंतिका जी के लिए किसी अधूरे गीत की तरह था।

सर्दियों की वह शाम जैसे दोनों के बीच कोई अनकही बात लिख रही थी। शायद यह शुरुआत थी, उस कहानी की जो समय के साथ पन्ना दर पन्ना खुलने वाली थी।

अगले दिन अवंतिका जी को कैफे के काउंटर पर सफेद गुलाब रखा मिला। जिसके कार्ड पर डैनियल का नाम लिखा था। यह सिलसिला अब रोज का हो गया था। वह कोई पत्र नहीं लिखता, शब्दों की जगह फूल छोड़ जाता, जो कहने से ज्यादा अनकहा कह जाते।

फूलों को वह अच्छे से सहेज कर रख लेती और महसूस करतीं कि, यह प्रतीक्षा, यह मौन ही उनका संवाद है। सर्दियों के दिन अब जैसे अपनी एक नई लय में ढलने लगे थे। कैफे शालोम ब्रू की टेबल, जो पहले एक अजनबी कोने की तरह थी, अब डैनियल के लिए एक परिचित ठिकाना बन गई थी। वह नियमित आगंतुक बन गया था, और उसे अब कभी ऑर्डर देने की जरूरत नहीं पड़ती थी। अवंतिका जी उसकी पसंद जान चुकी थीं। कॉफी के साथ एक प्लेट में स्ट्रॉबेरी टार्ट, कभी एप्पल स्ट्रूडेल, और कभी लेमन मैरिंग पाई।

डैनियल जब भी आता, वह खिड़की के पास वाली अपनी पसंदीदा सीट पर बैठता। बाहर, पहाड़ियों से उतरती ठंडी हवा और भीतर कॉफी और बेक्ड चीजों की महक का मेल, जैसे किसी पुराने संगीत का सुर ताल। अवंतिका जी

की नजर हमेशा उसकी तरफ होती, पर यह नजरें चुप्पी के भीतर छुपी बातें कहती थीं।

''आज क्या है?'' डैनियल ने मुस्कुराते हुए पूछता।

अवंतिका जी मुस्कुराते हुए प्लेट उसके सामने रख देती जिन में कभी पाइन नट्स और कभी हनी टार्ट होता।

डैनियल पहला निवाला लेता, और उसकी आँखों में चमक आ जाती और वह अवंतिका जी को प्रेम से देखता।

उनके बीच की बातचीत, जैसे धीमी आंच पर सिंकते इजरायली चल्लाह ब्रेड का स्वाद, हर शब्द, हर बात में सौंधी मिठास, जो मन के भीतर तक उतर जाती थी।

डैनियल अपने यात्राओं के किस्से सुनाता और अवंतिका कभी उसकी बातों में खो जाती, तो कभी उसकी कहानियों के किसी अनकहे हिस्से को टटोलती। दोनों के बीच यह संवाद, जैसे किसी अनगढ़ कविता का रूप ले रहे थे।

शामें यूँ ही बीतने लगीं। डैनियल के लिए यह कैफे अब केवल एक जगह नहीं, बल्कि एक अनुभव बन चुका था और अवंतिका जी के लिए, हर डिश जो वह उसके लिए परोसती, जैसे किसी अनकही भावना का इजहार थी। खिड़की के बाहर धुंध के पार छुपी घाटियाँ और भीतर की इस कहानी में, एक अनजानी समानता थी। दोनों अपनी गहराई में किसी को खींच लेने की ताकत रखती थीं।

वह हर बार नई कहानियां अवंतिका जी को सुनाता, उसकी अपनी यात्राओं की कहानियां। उसने जवानी के दिनों में दो बार माउंट एवरेस्ट फतह की थी, इसके इलावा कंचनजंगा, किलिमंजारो, मकालू आदि की यात्राएं वह अनंत बार कर चुका था। माउंट एवरेस्ट पर चढ़ाई करने वाले पहले इजरायली व्यक्ति डोरोन एरन से प्रभावित होकर उसने जीवन भर यायावरी को ही अपना धर्म बना लिया था। परिवार बसाने का ख्याल कभी उसकी प्राथमिकताओं में नहीं रहा। जवानी के दिनों की कुछ अधूरी प्रेम कहानियां उसने अवंतिका जी को सुनाई थीं, जो कभी अपने मुकाम तक नहीं पहुँच सकीं। अपनी घुमक्कड़ी के साथ वह हर बार अकेला ही चलता रहा, मानो उसकी सच्ची जीवन संगिनी उसकी यात्रा ही हो। उसका ज्यादातर वक्त यहां धर्मकोट या कसोल में बीतता, जहां उसके देश के अन्य लोग भारतीय जीवन में रचे बसे थे। वह गले में एक चेन डाले रहता था जिसमें एक हंसा के डिजाइन वाली अंगूठी होती थी।

अवंतिका जी रोज उसका इंतजार करतीं और उसके पास बैठ कर उसकी यात्राओं के बारे में सुनती रहतीं। उतनी देर कैफे को ताशी और पेमा संभालतीं। एक दिन अवंतिका जी ने साहस करके पूछा, ''यह हंसा वाली अंगूठी जो आपने गले में पहनी है... इसकी क्या कहानी है?''

डैनियल ने क्षणभर अंगूठी को देखा, जैसे कोई पुरानी स्मृति का द्वार खुला हो। उसकी आवाज धीमी और गहरी हो गई। ''यह मेरी माँ की थी। जब मैं छोटा था, वह इसे पहनकर कहती थीं, 'हंसा आत्मा का दूत है। यह हर तूफान में सही दिशा दिखाएगा।''

डैनियल कुछ पल रुका, फिर कहा, 'माँ अब नहीं हैं। लेकिन इस अंगूठी में उनका स्पर्श बचा है। कभी–कभी लगता है, यह मुझे उनके पास वापस ले जाएगी।''

अवंतिका ने चुपचाप उस अंगूठी को देखा। उसमें जैसे माँ की याद की एक अनकही कहानी जीवित थी।

शालोम ब्रू में अवंतिका और डैनियल एक अदृश्य पुल के दोनों किनारों पर खड़े यात्री थे, जैसे कोई किसी अंतरिक्षीय यात्रा पर निकले हों, समय और स्थान के बंधन से मुक्त। अवंतिका का चेहरा, जो हमेशा अपने भीतर की गहरी सोच को ढके रहता था, अब हल्का हो रहा था, वह उनसठ की उम्र में, फिर से युवावस्था की ताजगी को महसूस कर रही थीं जैसे शरीर और आत्मा ने समय की सीमाओं को पार कर लिया हो। वे दोनों, एक अदृश्य राग में बंधे हुए थे, वह राग न किसी शब्दों में समाया था, न किसी ध्वनि में, वह बस एक अनुभव था। डैनियल का उनके जीवन में आना सिर्फ एक संयोग नहीं था, बल्कि एक चेतना की जागृति थी। जहां कोई सोच नहीं थी, कोई भविष्य नहीं था, बस वर्तमान का एक संगीत था, जो भीतर से बाहर और बाहर से भीतर बह रहा था।

एक शाम वो दोनों पहाड़ की चोटी पर खड़े थे। सामने धौलाधार का बर्फ से ढका विस्तार था, जैसे उस पहाड़ ने अपनी आत्मा के सच्चे रंगों को शांतिपूर्वक आच्छादित कर लिया हो। चाँदनी जब बर्फ पर गिरती, तो पूरा इलाका एक दिव्य आभा में डूबा प्रतीत होता। ठंडी हवा देवदार और बांज

के वृक्षों के बीच से गुजरती हुई ऐसे महसूस हो रही थी जैसे कोई अदृश्य बाँसुरी बजा रही हो। कहीं दूर हिमालयन मॉनाल पक्षियों की स्वर–लहरियाँ सुनाई दे रहीं थीं। नीचे की पहाड़ी से मोनेस्ट्री से हल्का धुआं उठ रहा था, जैसे पर्वतों की गहरी चुप्पी में कुछ अज्ञेय विचार ऊपर उठ रहें हों।

डैनियल ने धीरे से कहा, ''क्या आपने सुना? ये हवा, ये पक्षी... ये पेड़ों की फुसफुसाहट... सब अपनी कहानी कह रहे हैं।''

अवंतिका ने उस वक्त महसूस किया कि पहाड़ का मौन, सचमुच मौन नहीं था। वह एक अदृश्य गीत था। एक सुंदर कविता। अवंतिका जी की आँखें, जो दूर किसी काल्पनिक संसार में खोई हुई थीं, वापस डैनियल की तरफ लौट आईं। उन्होंने धीरे से कहा, ''डैनियल... सुनिए, एक कविता है।'' उन्होंने बिना किसी तैयारी के, सहज ही पाब्लो नेरुदा की कविता सुनानी शुरू की।

''मैं तुमसे प्रेम करती हूँ, यह जाने बिना कि कैसे, कब, या कहां मैं तुमसे प्रेम करती हूँ, बिना किसी जटिलता या गर्व के निश्चल, निष्कपट प्रेम... क्योंकि मुझे पता है इसके अलावा कोई और रास्ता नहीं है...''

उनके शब्द हवा में तैर रहे थे। वह पल जैसे ठहर गया था। दो प्रेमियों का मिलना, बर्फ के पहाड़ों और उन ठंडी हवाओं के बीच, जहाँ सब कुछ था, फिर भी कुछ नहीं था। शब्दों का असर पहाड़ की चुप्पी में गूंज उठा था।

डैनियल उनकी बातें गहरे ध्यान से सुन रहा था, और फिर उसने आवाज में एक ठहराव के साथ कहा, ''नेरुदा तो यह भी कहते हैं, 'क्या कहते हैं चक्रवातों को, जब वे ठहरे हुए होते हैं?' ''

अवंतिका जी उसके शब्दों का अर्थ समझ रही थीं, जैसे वे उनके अपने अनुभवों की गूंज हो, लेकिन कुछ बोली नहीं, मानो उन शब्दों का उत्तर उनके भीतर गहरे कहीं छिपा हुआ था, जिसे वह शब्दों में नहीं बता सकतीं थीं।

दोनों वापस कैफे की तरफ चल पड़े। चलते चलते डैनियल एक यहूदी गाना गुनगुनाना रहा था ''एरेव शेल शोशनीम, नेत्से ना एल हाबुस्तान''... जिसका अर्थ उसने अवंतिका जी को बताया कि ''यह गुलाबों की शाम है, चलो बगीचे की ओर चलें, जहां सुगंधित फूल और खुशबू हमारी राह को सजाएंगे...''

दोनों की आंखें ऐसी थीं जैसे दोनों ही अपने भीतर कुछ अनदेखा खोज रहे हों। उनके गानों और कविताओं में एक नई लय थी, जैसे एक दूसरे के पास आना ही था, बिना किसी शब्द या सीमा के। दोनों का अकेलापन धीरे–धीरे मिटता जा रहा था, जैसे पगडंडी पर चलते हुए वे एक–दूसरे के संग वह खालीपन भर रहे हों, जिसे कभी शब्दों में नहीं बांधा जा सकता था।

अवंतिका जी ने देखा, डैनियल की आंखों में भी वही नमी थी, जो उनके अपने दिल में थी। उनका यह मिलन, यह यात्रा, जैसे एक अदृश्य धागे से बंधी हुई हो। एक बेजुबान समझ, जो दोनों के बीच अब एक सहज सी बात बन गई थी। वह जानती थीं या शायद नहीं भी जानती थीं कि इस पल के साथ ही, इस पहाड़ी रास्ते पर, प्यार धीरे–धीरे कदम रखते हुए दस्तक दे रहा था। जैसे उनके बीच कुछ अनकहा था, जो धीरे–धीरे अब शब्दों में तब्दील हो रहा था। विशुद्ध प्यार, जो अभी तक दबे पांव आ रहा था, अब अपना रूप लेने को लगभग तैयार था। वे दोनों, अकेले होते हुए भी, किसी और ही जगह, किसी और ही समय में मौजूद थे, पैरेलल युनिवर्स में शायद।

समय आगे बढ़ रहा था और उनका अनकहा प्यार भी। फरवरी की बर्फबारी की उस शांत और सर्द शाम, जब धर्मकोट को बर्फ ने अपनी आगोश में लेकर उसकी गति को शांत कर दिया था, अवंतिका जी अकेली कैफे में बैठी हुईं थीं। खिड़की से गिरती हुई बर्फ को देख रही थीं। उनकी दृष्टि में एक अधूरी प्रतीक्षा थी, एक अनकहा आह्वान। शायद उनको किसी का इंतजार था। फिर अचानक, दरवाजे के उस ओर बर्फ की चादर के बीच एक छाया सी महसूस हुई। दरवाजा खुला और डैनियल का चेहरा, जो सर्द हवाओं और बर्फ के फाहों से नम था, सामने आया। उसकी आँखों में वही हल्की सी गर्मी थी, जो अवंतिका जी ने हमेशा महसूस की थी। वह चुपचाप, फायरप्लेस के पास जाकर बैठ गया, बिना किसी शब्द के। अवंतिका जी ने बिन कहे, उसे फ्रेंच प्रेस कॉफी और बाबका दिया, बाहर ''बसवेमक'' का साइन टांगा और खुद भी आकर उसके पास बैठ गई।

आज तक वो दोनों भीड़ में मिले थे। जब उन्होंने पहली बार एकांत में एक–दूसरे की आँखों में देखा, तो जैसे सब कुछ ठहर गया। कोई आवाज नहीं, कोई हलचल नहीं। डैनियल ने धीरे से अवंतिका के हाथ को छुआ और उस पल ने दोनों को ऐसे अपनी गिरफ्त में लिया, जैसे एक चुप्प सन्नाटा, जो एक–दूसरे के ख्यालों में खो जाने का पैगाम हो। उनके बीच की दूरी जैसे सिमट कर गायब हो गई और वह नाजुक स्पर्श दोनों के दिलों में एक हलचल की तरह महसूस हुआ।

डैनियल ने एक शांत मुस्कान के ''हंसा'' के डिजाइन वाली अंगूठी अवंतिका जी को पहना दी। अंगूठी में हाथ और एक आँख उकेरित थे, यह न केवल रक्षा का प्रतीक थी बल्कि एक अनकहा वादा भी, एक सूक्ष्म सा इशारा था। अपनी माँ की अंगूठी किसी को देना, शायद यही एक ऐसा पल होता है, जब शब्द नकारे जाते हैं और भावनाएँ अपनी पूरी गहराई में व्यक्त होती हैं।

अवंतिका जी की आँखों में नमी थी, जो शब्दों से कहीं अधिक कह रही थी। पहली बार, उनके दिल में यह एहसास गूंजा कि कोई उनकी आत्मा के उस कोने को देख सकता है, जहां प्यार और स्नेह की तलाश, निराशाओं में खो गई थी।

अवंतिका जी कुछ संभल कर बोलीं, ''डैनियल, तुमने ओब्लिवियन के बारे में सुना है।'' डैनियल– ''ओब्लिवियन? ये किसी कविता का नाम लगता है।'' अवंतिका जी– ''नहीं, ये एक नदी है। कहते हैं, जो भी वहां पहुंचा, उसने अपने सारे दर्द, सारी यादें... सब कुछ भूल दिया।''

डैनियल (मुस्कुराते हुए) : ''और ये नदी कहां मिलती है?''

अवंतिका जी– ''यही तो रहस्य है। इसका रास्ता कोई नहीं जानता। ये किसी नक्शे में नहीं है।''

डैनियल (थोड़ा हैरान)– ''तो लोग वहां पहुंचते कैसे हैं?''

अवंतिका जी (धीमे स्वर में)– ''शायद खोजने से नहीं, बुलाने से। जिसने भी उसे पाया, उसने उसकी धारा में डुबकी लगाई...या उसका जल पिया... फिर, वो हर दुख, हर कसक से मुक्त हो गया।

डैनियल (सोचते हुए)– ''हर दुख? क्या ये सच है?''

अवंतिका जी (आंखों में गहराई लिए): ''हां, डैनियल। यहां तक कि वो प्यास भी मिट जाती है, जो जन्म–जन्मांतर से इंसान के साथ चलती है।''

डैनियल (धीरे से)– ''ये नदी की बात नहीं कर रहीं हैं आप।''

अवंतिका जी (मुस्कुराकर)– ''तो तुम समझ गए।''

डैनियल (आंखें मूंदते हुए)– तो क्या आपको वो नदी मिल गई अवंतिका?

अवंतिका जी – ''शायद नदी ने खुद मुझे बुला लिया।''

बर्फ गिरती रही, फायरप्लेस जलता रहा और कैफे की पीली रोशनी में गूंजती जैज म्यूजिक की धुन, यह सब जैसे समय की धारा को रोककर उन्हें एक साथ समेट लेना चाहता हो। वे दोनों एक–दूसरे के करीब बैठे रहे, पूरी दुनिया से बेखबर और उस पल में, उनके बीच केवल एक ही सच था ''एक–दूसरे के प्रेम का एहसास'', जिसे केवल वायु, अग्नि और हिम ही समझ सकते थे। प्रकृति जैसे श्वास रोक, उस क्षण की साक्षी बन रही थी।

इस रिश्ते का क्या भविष्य था? दोनों में से कोई भी नहीं जानता था। प्रेम भविष्य नहीं देखता, वह बस वर्तमान में होता है। वह सिर्फ उस पल की सच्चाई है, जो हम जीते हैं। उम्र और समय, ये सब प्रेम के रास्ते में रुकावट नहीं डाल सकते। यह तो एक मुक्त प्रवाह है, जो किसी भी बंधन से परे, हमारी आत्मा को संपूर्ण करता है।

अवंतिका जी ने अपने सपनों का संसार पा लिया था, क्योंकि वे जान चुकी थीं कि प्रेम वही है जो बिना किसी अपेक्षा के बस ''होता'' है। वह प्रेम में खो गईं, उस शुद्ध प्रेम में, जो उम्र, समय, देशकाल, धर्म और परिस्थितियों से परे था। एक निर्वाण, जहां कोई बीती हुई यादें नहीं थीं, न भविष्य की चिंता। दोनों वर्तमान में, यहीं और अब, खोए हुए थे।

''शालोम ब्रू'' के भीतर दोनों प्रेमी उस क्षण में पूरी सृष्टि को समेटे हुए थे। •

पता : 4–रामरहीम एस्टेट, नीलमथा, लखनऊ–226002

मो. : 9919906100

सरप्राइज़

❑ प्रगति त्रिपाठी

मैं बेमन से पनीर के टुकड़े काटने लगी। रह रहकर यादों का समंदर हिलोरें मार रहा था और आंखों से आंसूओं की बरसात हो रही थी। मिष्टी ने सख्त हिदायत दी थी कि आज आप कढ़ाई पनीर, पुलाव, दाल–फ्राई और गुलाबजामुन बनाएंगी। वही डायनिंग टेबल पर बैठकर अपना होमवर्क कर रही थी। मिष्टी अपने नाम की तरह ही मीठी थी। बेटी कम एक साल से मेरी मां बनी हुई थी। मैंने खाना खाया या नहीं, समय पर सोई या नहीं, दवाईयां समय से ली कि नहीं, हर बात का ख़्याल रखना जैसे उसकी आदत बन गई थी। शायद परिस्थितियों ने उसे समय से पहले ही परिपक्व बना दिया था। मैं इस सोच में डूबी थी तभी फोन की घंटी से मेरी तंद्रा भंग हुई।

"मैडम आपके लिए पार्सल आया है।" अपार्टमेंट के गेट से सिक्योरिटी का फोन था।

मुझे लगा मिष्टी ने मुझे खुश करने के लिए कुछ ऑर्डर किया होगा। मैंने अप्रूवल दे दी। कुछ देर बाद डिलीवरी ब्वाय ने डोरबेल बजाई।

मैंने दरवाजा खोला तो सामने एक बड़ा सा बॉक्स दरवाजे के पास पड़ा हुआ पाया। मिष्टी तो बॉक्स देखकर उछल पड़ी लेकिन मैं.... अतीत में खो गई।

"राजीव इस बर्थडे पर आप मुझे क्या देंगे?"

"क्या चाहिए तुम्हें?"

"मेरे पास तो सबकुछ है फिर क्या मांगू!" सर खुजलाते हुए मैं सोचने लगी थी।

फिर मैंने उछलते हुए कहा "कुछ भी लेकिन सरप्राइज होना चाहिए।"

ऐसा कहकर मुझे लगा, जैसे मैं किसी खेल में जीत गई क्योंकि मुझे पता था कि राजीव को सरप्राइज गिफ्ट देने बिलकुल नहीं आता। हर बार मुझसे मेरा गिफ्ट सलेक्ट करवाते थे। वो हमेशा कहते देखो कोमल सरप्राइज मत मांगा करो। मुझे समझ नहीं आता कि मैं तुम्हारे लिए क्या लूं। इन मामलों में, मैं थोड़ा कच्चा हूं। मैं ये सब जानने के बाद भी राजीव से सरप्राइज की उम्मीद रखती थी। मैं सोचती कि जैसे रीमा के पति, रीमा के लिए सरप्राइज प्लान करते हैं, राजीव भी वैसा ही करें। शायद मैं ज्यादा ही फिल्मी थी। हां... एक दिन उन्होंने मेरी ये इच्छा भी

पूरी ही कर दी। अब लगता है कि मुझे उनसे सरप्राइज मांगने की ज़िद नहीं करनी चाहिए थी। आज मुझे अपने आप से चिढ़ मचती है। वो मनहूस दिन आज ही का था जब राजीव उस लकड़ी के ताबूत में बंद होकर आए थे। मैं पागल सरप्राइज़ देखने के लिए दरवाज़े पर दौड़ पड़ी थी और जब दरवाजा खोला तो मेरा सबकुछ उजड़ चुका था। मैं कुछ समझ नहीं पा रही थी और राजीव को बार–बार यही बोले जा रही थी, ऐसा मज़ाक मुझे बिल्कुल पसंद नहीं। नहीं चाहिए मुझे कोई सरप्राइज! चलो उठो। तुम्हारी हिम्मत कैसे हुई? मेरे साथ ऐसा घटिया मजाक करने की। लेकिन... वो तो सदा के लिए सो गए थे।

तब से मुझे अपने जन्मदिन से नफरत हो गई थी। मेरा बस चलता तो मैं अपने जीवन से इस दिन को हमेशा के लिए मिटा देती। इस दिन.. इस दिन मैं किसी संदूक में बंद हो जाना चाहती हूं, सागर की गहराईयों में खो जाना चाहती थी, जहां किसी की आवाज सुनाई न देती। 'हैप्पी बर्थडे' इस शब्द से नफरत हो गई थी मुझे।

"मम्मा... मम्मा!"

"हां " मिष्टी के झकझोरने से मैं वर्तमान में लौट आई।

"क्या मम्मा, आप अचानक कहां खो जाती है? ये देखिए इस बॉक्स में आपका फेवरेट नारंगी कलर का सूट है। एक फोटोफ्रेम है जिसमें आपकी कुछ बचपन की तस्वीरें हैं। ये शायद आपकी क्लासमेट्स होंगी। किसने भेजी होगी ये ?

नारंगी सूट...मैं सूट उठाकर देखने लगी।

"यार तुझे नारंगी रंग इतना पसंद क्यों है? मुझे तो बड़ा चकचक सा लगता है ये रंग।" मीता मेरे नारंगी रंग के प्यार पर अपनी राय देने लगी।

"अरे मुझे चटक रंग बहुत पसंद है और हां मेरी फेवरेट मुमताज को भी यही रंग पसंद है। वो गाना देखा तूने "बिंदिया चमकेगी, चुड़ी खनकेंगी...." हाय! क्या लगती है उस गाने में।" मैं झूमते हुए बोली।

"अपने आप को देखा है? जब देखो हल्के, मुरझाये रंगों में तैरते फिरती है। जीवन में रंग ना हो तो जीने का क्या मजा।" बहुत इठलाकर बोला था मैंने।

"ओहो तब तो हमारी मुमताज के लिए राजेश खन्ना भी ढूढ़ना पड़ेगा।" उसने मेरी टांग खिंचते हुए बोला।

"मम्मा?" मिष्टी चीख पड़ी।

"क्या हुआ है आपको? क्या सोच रही है आप?"

"मीता"

"क्या?"

"हां... मीता, ये उसी ने भेजे होंगे।" मैं संभलते हुए बोली।

"ये देखिए फोटो, इनमें कौन है मीता?" मिष्टी ने फोटो दिखाते हुए पूछा।

मैं आंखों में आंसू भरे, उस तस्वीर को देख नहीं पा रही थी। अपनी जिंदगी की तरह ही सबकुछ बड़ा धूंधला सा दिखाई दे रहा था। अभी तक नहीं सोचा कि आगे क्या करना है? कैसे अपनी बेटी के सपने पूरे करूंगी? कैसे उसके पापा की कमी पूरी करूंगी। वो भी तो घुटती होगी, रोती होगी, पापा के गले लगने के लिए तड़पती होगी मेरी तरह। मिष्टी का बचपना उससे छीन गया। मैं कुछ नहीं कर पाई। काश मैंने राजीव को बर्थडे पर आने से मना कर दिया होता तो.... वो उस एक्सीडेंट से बच जाते। मिष्टी की गुनहगार हूं मैं " ये सोचकर गले में कुछ अटक सा गया। मेरी सांस फूलने लगी। ऐसा लगा किसी ने मुझे इतनी ऊंचाई पर लाकर छोड़ दिया, जहां सांस लेना दूभर हो।

"मम्मा.. मम्मा, पानी लीजिए।" मिष्टी मेरा पीठ सहलाते हुए बोली।

"आज आपको क्या हो गया है? आपकी तबीयत ठीक नहीं लग रही है। चलिए आप कुछ देर कमरे में आराम कीजिए।" मिष्टी ने मुझे बिस्तर पर लिटा दिया और खुद बॉक्स से गिरे हुए रंग–बिरंगे कागज को उठाकर वापस उस बॉक्स में डालने लगी।

"यार उस लड़के को देखा क्या?"

"कौन से लड़के को?" मैंने अनजान बनते हुए कहा।

"अरे ये आर्मी वाला लड़का।" मीता ने मुझे कोहुनी मारते हुए कहा।

हमारे कॉलेज से कुछ ही दूरी पर आर्मी कैंप था जहां कैडेट्स की ट्रेनिंग होती थी। हर साल एक नया बैच आता।

आर्मी के लड़के इतने स्मार्ट और हैंडसम होते की लड़कियां उन्हें बिना देखे रह नहीं पाती और लड़के खैर गर्ल्स कॉलेज पास होना, उनको तो जैसे बिन मांगे मोती मिल गया था। जाने कितनी प्रेम कहानियां हर साल फलने–फूलने लगी थी। उनमें से एक कहानी हमारी भी थी।

राजीव को मैं पसंद करने लगी थी और वो मुझे लेकिन अभी हमारा प्यार सिर्फ नैनों तक ही सीमित था यानि अभी इशारों–इशारों में बातें होती थी हमारी।

कॉलेज के एनुअल फंक्शन में सारी लड़कियों ने साड़ी पहनने का फैसला किया। मैंने भी अपनी पसंदीदा नारंगी रंग की साड़ी पहनी। कॉलेज के प्रिंसिपल ने आर्मी कैंप को भी इन्विटेशन दिया था। कॉलेज लोगों से खचाखच भरा हुआ था लेकिन उस समय वहां सिर्फ हम दोनों के सिवा कोई नहीं था। बैकग्राउंड में 'छुप गए सारे नजारे ओय क्या बात हो गई' संगीत हवाओं में तैर रही थी। हम दोनों एक–दूसरे की आंखों में खोए हुए थे। लोगों की मौजूदगी का एहसास तब हुआ जब मेरा नाम माईक पर चार बार पुकारा गया। मेरा डांस परफॉर्मेंस था। गाना था बिंदिया चमकेगी। 'मेरे साजन बारात लेक आंगन... तू जिस रोज आएगा' वाले लाइन पर तो मैं शर्म से पानी–पानी हो गई।

जिस बात का मीता तक को पता ना था आज पूरे कॉलेज को पता चल गया। कहते हैं ना प्यार छुपाए नहीं छुपता। सच तो है, प्रियतम को देखते ही रोम–रोम से प्यार हिलोरें मारने लगता है। प्यार में पड़े लोगों को पहचानना बड़ा ही आसान होता है। फिर क्या था मीता के साथ दृ साथ पूरा कॉलेज मुझे प्यार में पड़ने का अहसास करवा जाता।

बात उड़ते–उड़ते पापा के कानों में पड़ी। फिर क्या था चट मंगनी पट ब्याह हो गया। आखिर मुमताज को राजेश खन्ना मिल ही गया। हंसते–खेलते, जीवन के बारह साल ऐसे गुजर गए जैसे कल ही की बात हो। यादों में तैरते हुए ना जाने कब आंख लग गई, कुछ याद नहीं।

"मम्मा, उठीए शाम हो गई।" हाथ में चाय की ट्रे लिए मिष्टी खड़ी थी।

मैं मिष्टी को एकटक देखती रही और सोचने लगी जिसका साहस बनकर मुझे खड़ा रहना है वो मुझे साहस देने में लगी है। अचानक ऐसा महसूस हुआ जैसे दो साल के बाद मैं नींद से जाग गई। मैंने उसी क्षण अपने आप को वचन दिया कि मैं जीवन से कभी हार नहीं मानूंगी। मिष्टी के लिए मुस्कुराऊंगी और खुश रहूंगी।

"मेरा केक कहां है?" मैंने मिष्टी से एक्साइटेड होते हुए पूछा।

तभी डोरबेल बजी।

मैंने तो सिक्योरिटी को अप्रूवल नहीं दिया फिर कौन आ गया!

दरवाजा जैसे ही खोला "हैप्पी बर्थडे टू यूं" कहते हुए तीन–चार लोग घर में घुस गए। 'अरे.. रे' अभी मैं उनको पहचानने की कोशिश कर रही थी तभी आवाज आई "हमें भूल गई मुमताज।"

इतना सुनते ही मैं मीता को पहचान गई। फिर बाकी मनु, पम्मी और दुर्गा को।

"तुम लोगों ने आने की खबर क्यों नहीं दी?" मैंने आश्चर्य से पूछा।

अरे हमने तो तुम्हें पहले ही क्लू दे दिया था। तुम ही नहीं गेस कर पाई।

"मम्मा, मैंने और आंटी ने मिलकर आपका बर्थडे सेलीब्रेट करने का प्लान बनाया था।" मिष्टी ने धीरे से कहा।

कोमल की आंखों में आंसू भर आए। "मेरा बच्चा..।" इतना कहकर मिष्टी को अपनी बाहों में कसकर भर लिया।

चलो .. चलो अब रोने–धोने का कार्यक्रम बंद करो और तुम अपनी नारंगी साड़ी पहनकर आओ। आज हम अपनी मुमताज को देखना चाहते हैं।

मैं साड़ी पहनकर आ गई। सबने मिलकर मेरा का बर्थडे मनाया। 'हैप्पी बर्थडे कोमल' की आवाज से कमरा गूंज गया।

आज 'हैप्पी बर्थडे कोमल' सुनकर अच्छा लग रहा था क्योंकि आज एक नई कोमल का जन्म हुआ जो आत्मविश्वास से लबरेज और जीवन को एक अलग नजरिए से देख रही थी। •

पता : बी–222, जी.आर.सी. शुभिक्षा एम.जे. नगर रोड, छोड़संदारा, बैंगलोर–560099

मो. : 9902188600

रतन श्रीवास्तव की दो ग़ज़लें

रतन श्रीवास्तव

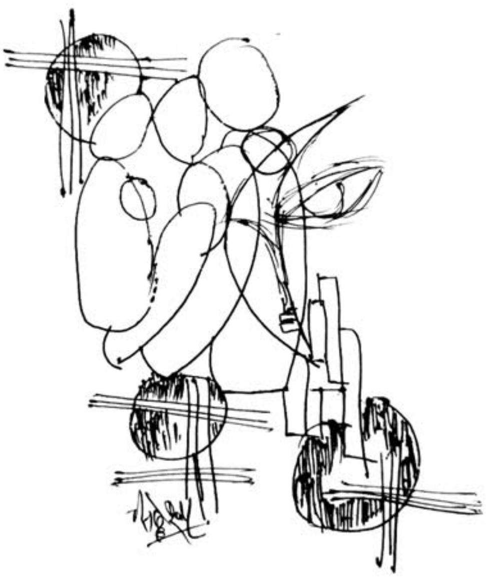

1

बदल जायेगी ज़िंदगी, जो तुम साथ दो।
दूर होगी हर बेख़ुदी, जो तुम साथ दो।।
भले अँधेरा बहुत है, इस राह में लेकिन,
दिखने लगेगी रोशनी, जो तुम साथ दो।।
आब समन्दर का लेकर क्या करेंगे हम,
मिट जायेगी तिश्नगी, जो तुम साथ दो।।
चल रहे हैं हम तो तन्हा गरम रेत पे,
बहनें लगेगी नदी, जो तुम साथ दो।।
बस कुछ लम्हों की ही नहीं ये बात है,
मुस्कुरायेंगी ये सदी, जो तुम साथ दो।।
खिलेंगे फूल अब इस वीराने दयार में,
हँसने लगेगी कली, जो तुम साथ दो।।
सुन लो दिल की आवाज़ बस एक बार,
दूर हो जायेगी बेकसी, जो तुम साथ दो।।

2

हो गई बेवफ़ा ज़िंदगी झूठे ऐतबार पर।
और हम करते रहे नाज़ अपने प्यार पर।।
न मिलीं वफ़ाएं और न ही ख़ुशबू मिली,
मैं हैरां हूँ बहुत, गुल–ए–गुलज़ार पर।।
हारकर ज़िंदगी, इतना तो जाना हमने,
कि जीती जाती है जंग, बस तलवार पर।।
कर बेवफ़ाई दिल को इतना रुसवा किया,
कि कोई अक़्स नहीं, दर–ओ–दीवार पर।।
जब अपनों ने ही गिराई हैं बिजलियाँ,
तो क्या लगायें तो हमतें हम बहार पर।।
मना रहे हैं जश्न वो अपनी जीत पर, और
मना रहे हैं हम मातम, अपनी हार पर।।

•

पता : 1/1358, रतन खण्ड, लखनऊ–226002
मो. : 9454410101

सूर्यकांत शर्मा की कविता

सूर्यकांत शर्मा

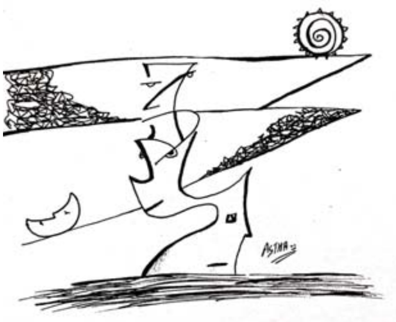

अपनों में अकेला

अपनों की गहन अनुभूति से
हुआ सघन तू अकेला।

सघन से स्थूल हो आया
रोता–रोता, अपनों में
तू आया फिर अकेला।

तेरे ख़्वाब तेरी ख्वाहिशें
तेरे मंसूबे तेरी तन्हाई।
हुआ ना तू
अपनों में अकेला
अपनी मर्ज़ी से
अपनी ही खुदगर्जी से।
कितने कितने जतन किए
तुझे समझाने को
तेरे जीवन के चाँद
सूरज ने।
रहो अपनों में अपने बन
मत अपने स्वार्थी सपने बुन।
कामना वासना के हाथों में
तू ऐसा झूला
तू वैसा भुला।
ऊपर वाले ने भी चाहा
तोड़ना तेरा भरम अकेला
पर तूने ना समझा
'उसके' करम का खेला।
छीनें उसने तेरे
जीवन के सूरज चाँद
और तारे।
बड़े हो गए तेरे अपने
मृग छौने सारे के सारे।
तू फिर लिपटा रहा
लंपट सा अपने विषय विकारों में
बन अपनों में अकेला।
जीवन के झंझावातों ने
तुझे कितना धकेला
तिस पर तू ज़िद पर अड़ा
रहा अपनों में अकेला खड़ा।
काल ने भी तुझे
विकारों की शतरंज समझाई
नवधा भक्ति और सत्संग की महिमा दिखलाई।
अब मत रह तू
अपनों में अकेला
नहीं तो काल के गाल
में तू समा जायेगा अकेला
बस अकेला बस अकेला।

•

पता : फ्लैट बी–वन, मानसरोवर, अकादमी, सेक्टर 3/5, द्वारका, नई दिल्ली–110001
मो. : 7982620596

विमलेश शर्मा की दो कविताएं

विमलेश शर्मा

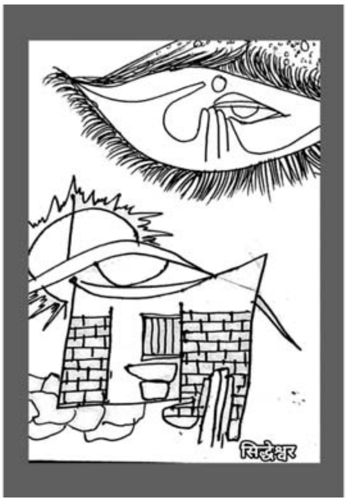

1. पुनर्भव !

शब्द तुम मुझमें उगना
कोयल की कूक बनकर
सृष्टि का राग बनकर
किसी जन्म के संगी बन
जो देर से मुझे ढूँढता आया हो

तुम थामना मुझे उस प्रेमी की तरह
जो प्रेयसी की चेहरे पर शिकन देख
उसके भीतर के ज्वार की तासीर जान लेते हैं

तुम आना जैसे कड़ी धूप के बाद
साँझ घिर आती है चुपचाप
जैसे धूपधुले पत्तों पर गिरती है ओस निःशब्द
तुम आना जैसे
प्रिय की अनुपस्थिति में
प्रिय ही लौटता है और सघन होकर

अप्रस्तुत में प्रस्तुत होकर
सघन विषाद में चैतन्य होकर
दुःख की दैनन्दिनी में
सुख का प्रेम पारितोषिक लेकर

शब्द तुम लौटना मुझमें
सजल सम्मोहन, प्रतीक्षा का ताप लेकर
तुम आना पहनकर कपास,
मेरे हृदय की वर्णमाला का अनुक्रम उलटकर !!

2. प्रार्थना !

उसे जीत सकूँ
आवाज के एक नाद से,
जो रोष की बारिशें करता रहा जीवन–भर।

कर पाऊँ
उसे जीभर प्यार
जिसने ईर्ष्या के ताप से झुलसाया।

लिख पाऊँ ऐसे कि
जो रोया नहीं हो आजीवन
वह रो दे शब्द की एक छुअन से

जिसमें आत्ममुग्धता का अतिरेक हो
वो तिनके भर त्याग को देखकर बरबस बरस पड़े

ए खुदा जो जानता हो धूप में खिलना
उसे बिखरने की सहूलियत देना

जो बादल सा चुप हो
उसे बारिशों की खनक हासिल हो

जो इंतजार से गाफिल हो
उसको साथ की हैरतों की मुसलसल नवाजिशें मिलें!

गजल के फूल खिले वहाँ
जहाँ बाद बिछुड़ने गम के बादल नसीब हुए

•

पता : अजमेर, राजस्थान
मो. : 9414777259

पायल सोनी की कविता

पायल सोनी

'कटे पंखों की उड़ान'

मैंने देखा,
अंधेरे कोनों में सिसकती रोशनी,
टूटी कलम की निःशब्द व्यथा,
पन्नों पर लिखी अनकही वेदना,
जहाँ प्रश्न नहीं, उत्तर रो रहे थे।

मैंने सुना,
दीवारों से टकराती असफल साँसें,
संघर्ष की चीत्कार में डूबी उम्मीदें,
कहीं कोई छात्रा,किसी कोमल हृदय की
मौन समाधि बन चुकी थी।

यह कौन–सा तंत्र है?
जहाँ अंक ही जीवन का पर्याय हैं,
जहाँ स्वप्नों को उगने से पहले ही
मिट्टी में दबा दिया जाता है,
जहाँ शिक्षा का प्रकाश नहीं,
प्रतियोगिता की आग जलती है।

क्या यही शिक्षा है?
जहाँ गुरुकुल की वाणी मौन हो,
जहाँ तक्षशिला–नालंदा की गूँज
चयनित और अस्वीकृत की
सूची में खो जाए?

ओ निर्दय समाज!
तुम्हारे अंकपत्रों में लिखा न्याय
क्यों इन कोमल प्राणों का दंड बनता है?
क्यों जीवन का मूल्य एक परीक्षा में सिमटता है?
क्यों हर असफलता मृत्यु का आमंत्रण बनती है?

आज फिर एक दीप बुझा है,
आज फिर एक पंख कटा है,
पर पूछो उस अंधियारे से
क्या सूरज फिर नहीं उगेगा?

•

पता : बी 4/23, गोमती नगर विस्तार,
सेक्टर–1, लखनऊ–226010

अशोक अंजुम की ग़ज़लें

अशोक अंजुम

1

बना रहे हैं लोग जहां में जाने कैसी–कैसी बात
उस पर तुर्रा तने हुए हैं लेकर अपनी–अपनी बात

इतने कड़वे निकलेंगे वे इसका कुछ अंदाज़ न था
जब भी मिलते थे करते थे वे जो मीठी–मीठी बात

कल तक जिस बच्चे के मुँह से फूल बरसते रहते थे
उसने कह दीं आज अचानक कैसे तीखी–तीखी बात

करीं वक़्त ने ताजपोशियाँ कुछ यूँ नकली बातों की
थकी–थकी–सी आज लग रहीं सारी अच्छी–अच्छी बात

धीरे–धीरे सारे जग ने उनको अपनाया 'अंजुम'
इतनी सच्चाई से बोलीं उसने झूठी–झूठी बात

2

मेरे अन्दर था इक घना जंगल
कट गया सब हरा–भरा जंगल

जलजले आये काँप उठ्ठी ज़मीं
दे गया कैसी बद्दुआ जंगल

आरज़ू मेरी एक हिरनी–सी
और मीलों तलक घना जंगल

झूठ को रंगमहल के तुहफ़े
साँच को वो ही बारहा जंगल

प्रेम–दीवाने अब कहाँ जायें
उसने हँसकर बता दिया जंगल

कहर से आरियों के नावाकिफ़
झूमता था कभी हरा जंगल

कंकरीटों के वन उगे अंजुम
हो गया कब का लापता जंगल

3

द्वार पर साँकल लगा कर सो गए
जागरण के गीत गाकर सो गए

सोचते थे हम कि शायद आएँगे
और वे सपने जगाकर सो गए

काश वे सूरत भी अपनी देखते
आईना हमको दिखाकर सो गए

रूठना बच्चों का हर घर में यही
पेट खाली छत पे जाकर सो गए

हैं मुलायम बिस्तरों पर करवटें
और वे धरती बिछाकर सो गए

घर के अंदर शोर था हाँ इसलिए
साब'जी दफ्तर में आकर सो गए

कितनी मुश्किल से मिली उनसे कहो
वे जो आज़ादी को पाकर सो गए

फिर गजल का शेर हो जाता मगर
लफ़्ज कुछ चौखट पे आकर सो गए

4

हर सितम चुपचाप सहकर बोलता कुछ भी नहीं
ऐ बशर, क्या जिंदगी से वास्ता कुछ भी नहीं

इस तरफ से उस तरफ से छोड़ता कुछ भी नहीं
और कहता है हमेशा चाहता कुछ भी नहीं

बदहवासी, भीड़, तल्ख़ी दूर तक बस रास्ते
उफ् धुआँ–सा जिस्म में है सूझता कुछ भी नहीं

पक चुका है इस कदर इंसान अब इस दौर का
हाँ तो कर देता है पर वो मानता कुछ भी नहीं

जब भी आता है सदा ही ख़्वाब दिखलाता है वो
और जाकर राजधानी देखता कुछ भी नहीं

5

बिन तेरे अब खुशी रहेगी क्या
ज़िन्दगी, ज़िन्दगी रहेगी क्या

बस यही बेबसी रहेगी क्या
ख़ामुशी ख़ामुशी रहेगी क्या

जब तलक जद में आयगा दरिया
तिश्नगी, तिश्नगी रहेगी क्या

दूर मंज़िल है राह मुश्किल है
यूँ ही ज़िन्दादिली रहेगी क्या

रहनुमाओ, तुम्हारी सोचों पर
ग़र्द यूँ ही जमी रहेगी क्या

जब खुलेंगी हमारी आँख 'अंजुम'
रौशनी, रौशनी रहेगी क्या

•

पता : अभिनव प्रयास
स्ट्रीट–2, चंद्र विहार कॉलोनी (नगला डालचंद)
क्वारसी बायपास, अलीगढ़– 202002
मो. : 9258779744

जीवन मूल्यों से साक्षात्कार कराती बाल कहानियां

❑ सुरेन्द्र अग्निहोत्री

'बादल और बिजली' लेखिका डॉ. अर्चना प्रकाश द्वारा लिखित एक प्रेरणादायक और शिक्षाप्रद पुस्तक है। पुस्तक में कुल 11 बाल–कहानियां हैं जिनके शीर्षक इंद्रधनुष, झोला और पॉलिथीन बैग, बादल और बिजली, सच्चा प्यार, उड़ान, डबल गिफ्ट, असली सुंदरता, सैर में सीख, अहिल्याबाई होल्कर, पीर पराई, अनोखी बात हैं। लेखिका ने विभिन्न स्थितियों से मुकाबले, साहस, आत्मविश्वास और नैतिक शिक्षा पर आधारित हैं।

लेखिका डॉ. अर्चना प्रकाश साहित्य में कहानी, बाल कहानी–विधा की अनवरत प्रकाशित होने वाली कथाकार हैं।

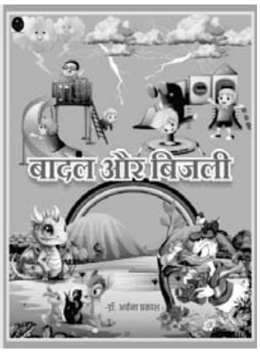

प्रथम कहानी 'इंद्रधनुष बच्चों को डर और शरारतों से बचने का संदेश देती है। यह कहानी आसमान में 'इंद्रधनुष बनने की जानकारी देती है। झोला और पॉलिथीन बैग कहानी पर्यावरण संरक्षण सिखाती है बादल और बिजली कहानी किसी भी बात को बिना जानकारी के न मानें और न ही दूसरों को डराएं। कहानी में महत्वपूर्ण संदेश दिया गया है।

'अहिल्याबाई होल्कर कहानी शिक्षा देती है कि सही नेतृत्व सहानुभूति, सेवाभाव और समर्पण के आधार पर संभव होता है।इस पुस्तक में बाल मन के अनुरूप लिखी ग्यारह कहानियों में जादुई आकर्षण है।'बादल और बिजली' बाल कहानी–संग्रह संवेदना सहानुभूति और समानुभूति जैसी भावनाओं का संचार करने में सक्षम है।

कुल मिलाकर, इन सभी बाल कहानियों में लेखक ने सरल, प्रभावशाली और बच्चों की समझ में आने वाली भाषा का उपयोग किया है। जीवन मूल्यों से साक्षात्कार कराती बाल कहानियां निश्चय ही बच्चों के लिए प्रेरणा प्रदान करेंगी।

पुस्तक : 'बादल और बिजली' (बाल कहानी–संग्रह) कहानीकार : डॉ. अर्चना प्रकाश प्रकाशक : शतरंग प्रकाशन, लखनऊ पृष्ठ : 32 मूल्य : रु. 100। •

पता : ए–305, ओ.सी.आर., विधान सभा मार्ग, लखनऊ–226001
मो. : 9415508695

यात्रा साहित्य का सफ़रनामा

❑ सूर्यकांत शर्मा

भारत में यात्रा साहित्य का इतिहास भारतेन्दु काल से ही प्रारंभ हुआ है। भारतेन्दु ने खड़ी बोली का विकास कर कितने ही नवीन साहित्य को जन्म दिया यह बोलि जन जन की बोली थी। किंतु आधुनिक काल में यात्रा साहित्य के सृजन का श्रेय केवल महा पंडित राहुल सांकृत्यायन को ही जाता है। गौर से देखा जाए तो यात्रा वृत्तांत लेखन से सिर्फ साहित्य ही समृद्ध नहीं होता बल्कि देश दुनिया की सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, भौगोलिक, राजनीतिक, सामाजिक और सांगीतिक परंपराओं को समझने और ज्ञान पर पैसा को तृप्त करने का शुभ अवसर भी प्राप्त होता है।लेखक ने रामायण और महाभारत को भी यात्रा साहित्य से जोड़ा है। इसके पीछे उनका तर्क है कि आदि गुरु शंकराचार्य द्वारा देश के चारों दिशाओं में पीठ स्थापित करने का उद्देश्य भी स्वदेश की विभिन्न सांस्कृतिक भौगोलिक और वेद पुराणों के मर्म को प्रचारित प्रसारित करना था।

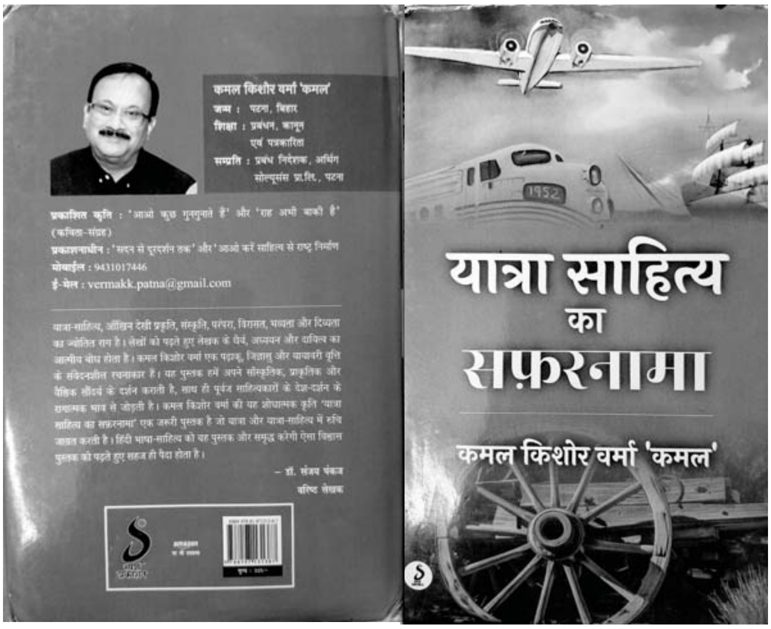

समीक्ष्य पुस्तक, भारत में यात्रा साहित्य का उद्भव एवं हिंदी यात्रा साहित्य पर आधारित है। यह पुस्तक हमें अपनी सांस्कृतिक, प्राकृतिक और वैश्विक सौंदर्य के दर्शन कराती है, साथ ही साथ पूर्वज साहित्यकारों के देश–दर्शन के रागात्मक भाव से जोड़ती है। हमारे देश में यात्रा साहित्य के पुरोधाओं में कुछ नाम विशेष हैं जिनमें महान राष्ट्रवादी योद्धा सन्यासी स्वामी विवेकानंद महा पंडित राहुल सांकृत्यायन, सच्चिदानंद हीरानंद अज्ञेय, श्री रामवृक्ष बेनीपुरी, यशपाल बनारसी दास चतुर्वेदी डॉक्टर नागेंद्र तथा अन्य के नाम उल्लेखित हैं। पुस्तक में लेखक ने अन्य विद्वानों के माध्यम से भी पाठक को यह प्रेरित किया है कि वह प्रकृति दर्शन को घर में बैठकर देख नहीं

सकता इसके लिए तो उसे बाहर निकाल कर जाना ही होगा और इस बात को उन्होंने ध्रुव गुप्ता की ग़ज़ल के शेर को उद्धृत करके अपनी बात कही है–

घर से बाहर निकाला कर।
दुनिया को भी देखा कर।
पढ़ के सब कुछ सीखेगा
देखके भी कुछ सीखा कर।

यात्रा साहित्य के इतिहास की झलक हमारे वेद, पुराण, शास्त्र, और तो और महाभारत और रामायण जैसे पौराणिक ग्रन्थ भी एक यात्रा ही तो हैं?! रामायण की अगर हम संधि विच्छेद करते हैं तो राम़अयन अर्थात राम की यात्रा!!! यूं भी यदि ध्यान से सोचें तो संपूर्ण जीवन एक यात्रा ही तो है। संस्कृत साहित्य में कालिदास और बाणभट्ट के साहित्य में भी आंशिक रूप से यात्रा का वर्णन मिलता है।

पुस्तक के लेखक स्वयं भी यात्रा और साहित्य यात्रा प्रेमी हैं, अतः कुल बाईस अध्याय में यात्रा साहित्य को प्रस्तुत करना एक सुखद आश्चर्य की अनुभूति से सराबोर करता है। सभी अध्ययन क्रमवार देशी विदेशी, अर्वाचीन प्राचीन और आधुनिक काल खंडों के सटीक और सहज ब्यौरे को पेश करते हैं।पुरुष और महिला साहित्यकारों पत्रकारों कथाकारों या अन्य साहित्यिक विधा से जुड़े सृजन कर्मियों का उल्लेख और साथ ही साथ उनकी कुछेक प्रमुख कृतियों का संक्षिप्त वर्णन पाठक की इस पुस्तकीय यात्रा को रोचक और कौतूहलपूर्ण बनाते हैं।लेखक ने यह प्रभावपूर्ण ढंग से कहा है कि घुम्मकड़ी स्वभाव जीवन को गतिशील रखता है और यही जिजीविषा है। इसी बात को आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री के गीत के अंश के रूप में उन्होंने प्रस्तुत किया है पाठक इसकी बानगी से अभिभूत अवश्य होंगे।

गति है तो जीवन है !
मुझे रोक कर रखो नहीं
मेरा अमूल्य क्षण क्षण है!

यहीं पर यह कहना भी बेहद प्रासंगिक है की यात्रा जीवन का उद्देश्य है यात्रा साहित्य भी मानव मात्र के कल्याण के उद्देश्य होने के साथ–साथ अर्थशास्त्र का भी एक सशक्त और प्रभावी पहलू है यदि आप इतिहास को उलट–पलट कर देखेंगे तो आर्थिक संपन्नता और आर्थिक संपन्न होने की इच्छा भी यात्रा साहित्य के साथ ही जुड़ी है।

आज के इंटरनेट और डिजिटल संसार में पुस्तकों की आमद और उसकी स्वीकार्यता अब कुछ कठिन हो चली है।इसका कारण इंटरनेट पर सारी की सारी प्राथमिक और अन्य रुचिकर सूचनाएं यथा स्थान व्यक्ति, प्रसंग, जानकारी, प्रासंगिकता और संस्मरण महज एक क्लिक पर उपलब्ध हैं। पुस्तक में लेखक ने ग्लोबलाइजेशन और यात्रा साहित्य की इंटरनेट पर उपलब्धि के बारे में भी सटीक सूचनाओं दी हैं इंटरनेट के द्वारा ई–पत्रिका, ब्लॉग, सोशल नेटवर्किंग साइट इत्यादि पर भी भरपूर मात्रा में यात्रा साहित्य उपलब्ध है और यह लिखा भी जा रहा है। इसके कुछ उदाहरण है वेब दुनिया, सृजन सरोकार, रचनाकार, समालोचन इत्यादि। यही कारण है कि उपरोक्त वर्णित इंटरनेट के माध्यमों के कारण लोग अपने सामाजिक सांस्कृतिक राजनीतिक साहित्यिक संगीत ललित कला आदि की रुचियां को शब्द दे रहे हैं अभिव्यक्ति का यह माध्यम आसान है इसकी पहुंच व्यापक स्तर पर है ऐसे बहुत से ब्लॉक भी आजकल संचालित है जिसमें रचनाकार सीधे–सीधे अपने यात्रा अनुभवों को संजोग कर पाठकों को संजीव ढंग से परोसते हैं।यहां पर यह कहना भी बहुत जरूरी है कि एक ओर यात्रा बाह्य जगत के सत्य से व्यक्ति और पाठकों का परिचय कराती है तो वह दूसरी ओर स्वयं को भी जानने का अवसर प्रदान करती है। यहां पर परम श्रद्धेया स्वर्गीय महादेवी वर्मा का कथन कितना प्रासंगिक और आज भी उतना ही नया है जितना कि वर्षों दशकों पहले था– हमारी संस्कृति में यात्राओं का विशेष महत्व है क्योंकि इस विचित्रता भरी धरती में एक संस्कृति का प्रश्न यायावरी के साथ जुड़ा है।

तिस पर भी वर्तमान समय की पढ़ने की प्रवृत्ति और उसी के अनुरूप यदि कंटेंट को प्रस्तुत किया जाए तो पुस्तक का स्वागत ही नहीं वरन उसकी बिक्री का ग्राफ भी ऊपर की ओर ही जायेगा। इसमें राजनैतिक यानी सरकारी इच्छा शक्ति का भी समावेश नितांत आवश्यक है। अब प्रस्तुत

पुस्तक का प्रकाशन मंत्रिमंडल सचिवालय विभाग राजभाषा बिहार सरकार के अनुसार अनुदान के कारण संभव हो पाया है।

पुस्तक में यात्रा को समग्र रूप से प्रस्तुत कर उसके विभिन्न रूपों उदाहरण के तौर पर तीर्थ यात्रा, स्व यात्रा, साहित्यिक यात्रा के सभी प्रकारों को यथास्थान यथायोग्य संदर्भों में बहुत ही रोचकता से वर्णित किया गया है यहां पर कुछ अध्याय पाठकों के लिए विशेष हो सकते हैं यथा यात्रा साहित्य का सृजन, पौराणिक काल में यात्रा साहित्य सृजन ,प्राचीन काल में यात्रा साहित्य सृजन, आधुनिक काल के आरंभिक कालखंड में यात्रा साहित्य सृजन, आधुनिक काल के स्वतंत्रता पूर्व कालखंड में यात्रा साहित्य सृजन, आधुनिक काल के स्वतंत्रोतर कालखंड में यात्रा साहित्य सृजन इत्यादि। अस्तु ये सभी अध्याय पाठक को विषय प्रवृत करने के साथ यात्रा से संबंधित आधारभूत जानकारियां सरस अंदाज से बताते चलते हैं।

पुस्तक दो अध्यायों में प्रमुख यात्रा साहित्यकार और महिला साहित्यकारों के नामों उनके योगदान और उनकी अद्वितीय कृतियों को बताती है। यही नहीं कुछ खास खास कृतियों पर बेहद सारगर्भित परंतु संक्षिप्त सी टिप्पणी भी करती है।उदाहरण के तौर पर राहुल सांकृत्यायन अज्ञेय और नागार्जुन की घुमक्कड़ वृहद त्रयी भी यहां पर उनकी कालजयी रचनाओं घुमक्कड़ शास्त्र, 'वोल्गा से गंगा तक', 'मेरी लद्दाख यात्रा', 'लंका यात्रावली', 'मेरी यूरोप यात्रा', 'मेरी तिब्बत यात्रा', 'यात्रा के पन्ने', 'मेरी यूरोप यात्रा', 'मेरी जापान यात्रा', 'ईरान यात्रा', 'तिब्बत में सवा वर्ष', 'किन्नर देश में', 'रूस में 25 मास' इत्यादि हैं। वही सच्चिदानंद हीरानंद अज्ञेय की कृति 'अरे यायावर याद रहेगा', 'एक बूंद सहसा उछली', 'मौत की घाटी में' और इसके साथ ही साथ काका कालेलकर, फणीश्वर नाथ रेणु, मोहन राकेश की कृति 'आखिरी चट्टान तक', निर्मल वर्मा की कृति, 'चीड़ों पर चांदनी', कृष्ण नाथ की 'स्पीति में बारिश' राजकुमार के 'यूरोप के स्केच' कृष्णा सोबती का 'बुद्ध का कमंडल लद्दाख', अमृतलाल वेगड़ का 'तीरे तीरे नर्मदा', यशपाल की राह बीती, देवेंद्र सत्यार्थी की 'सफरनामा पाकिस्तान', धर्मवीर भारती की 'यात्राचक्र', श्रीकांत वर्मा की 'अपोलो का रथ', मनोहर श्याम जोशी की 'कश्मीर से कच्छ तक', नासिरा शर्मा की अफगानिस्तान बुजकशी का मैदान, असगर वजाहत की 'अवाकरु', रामवृक्ष बेनीपुरी की 'पैरों में पंख बांधकर और उड़ते चलो उड़ते चलो', प्रभाकर माचवे की 'गोरी नजरों में हम', बलराज साहनी की 'रूसी सफ़रनामा' डॉक्टर नागेंद्र की प्रवासी की यात्राएं राम दरश मिश्र की बना हुआ इंद्रधनुष भर का सपना और पड़ोस की खुशबू जैसी रचनाओं को अंकित किया गया है।

इस पुस्तक में महिला रचनाकारों के योगदान को भी हिंदी यात्रा साहित्य में विशेष रूप से अंकित किया गया है। लेखक ने एक और तथ्य की प्रधानता को रेखांकित किया है। हिंदी के यात्रा साहित्य में महिला यात्रा साहित्य रचनाकारों की संख्या सन 1990 के बाद तेजी से बड़ी है और इसका कारण वैश्वीकरण, मध्य वर्ग का तेजी से विकास होना, महिलाओं की शिक्षा एवं रोजगार में वृद्धि, आर्थिक स्थिति में सुधार होना बताया गया है। पाठकों को बहुत हैरानी होगी की पहली महिला यात्री साहित्य की रचनाकार श्री हरदेवी जी रहीं जिन्होंने लंदन यात्रा का संस्मरण वर्ष 1883 में एक पुस्तकीय प्रयास में लाहौर से प्रकाशित कराया था।

लेखक ने अपनी इस पुस्तक में चुनिंदा महिला यात्रा साहित्यकारों और कृतियों पर बड़ी सारगर्भित टिप्पणियां कर के उनके योगदान को मजबूती से उकेरने का सफल प्रयास किया है। उदाहरण के तौर पर सत्यवती मलिक की कश्मीर की सैर पदमा सुधि का यात्रा वृतांत 'अलकनंदा के साथ–साथ' यही कहानी प्रसिद्ध लेखिका शिवानी के यात्रा वृतांत आमदेर शांति निकेतन स्मृति कलश एक थी राम रति का भी जिक्र किया गया है। वहीं इंदु जैन कृत यात्रा वृत्तांत पत्तों की तरह चुप, राजा बुद्धि राजा की रचना साकुरा के देश में, पुष्पा भारती कृत सफर सुहाने पद्‌मा सचदेव आंखिन देखी, कुसुम अंसल द्वारा कृत सरे राह चलते–चलते नासिर शर्मा की कृति जहां फव्वारे लहू रोते हैं अनुराधा बेनीवाल की कृति आजादी मेरा ब्रांड, मृदुला गर्ग की कुछ–कुछ भटके, हेमा उनियाल की कुमाऊं के प्रसिद्ध मंदिर का उल्लेख है।

पुस्तक में कहीं–कहीं प्रूफ रीडिंग गलतियां है पर वह

पठनीयता के आनंद में बाधक नहीं हैं। पुस्तक में रंगीन चित्रों का समावेश पुस्तक की अपील को और बढ़ा सकता था।

पुस्तक के अंतिम अध्यायों में से एक उल्लेखनीय अध्याय है विदेशी यात्रा साहित्यकारों की अनुभव विचार और भारत का वर्णन युवाओं को यह अध्याय विशेष रूप से न केवल प्राचीन जानकारी से लैस करेगा वर्णन उन्हें अपने सांस्कृतिक और ऐतिहासिक विरासत पर गर्व करने का मौका भी देगा और साथ ही साथ यह जानकारी भी देगा कि इन विदेशी साहित्यकारों ने रचनाकारों ने पत्रकारों ने भारत के बारे में क्या कहा है उदाहरण के तौर पर मेगस्थनीज, फाह्यान, इब्नबतूता, फ्रांसिस वर्नियर रॉबर्ट कैलासो, हरमन हेस, फ्रैंकोइस वर्नियर, जॉन के, सैम मिलर, अलबरूनी के नाम उनके संक्षिप्त कथन और योगदान बताए गए हैं। पुस्तक में एक छोटा सा हिस्सा परंतु बेहद सटीक रूप से भारत आने वाले यूनानी यात्रा साहित्यकारों पर भी केंद्रित है जिसमें उन्होंने उनके नाम के अलावा बेहद संक्षिप्त रूप से यह बताने की कोशिश की है कि वह कब कहां और किस काल में भारत आए ऐसे ही कुछ मशहूर नाम यथा हेरोडोटस–सिकंदर के पहले आने वाला यह पहला यात्री था इस इतिहास का जनक भी कहा जाता है भारत भ्रमण कर किसने हिस्टोरिकल नामक पुस्तक की रचना की। टेसियस– यह यात्री भी सिकंदर आने से पहले भारत आने वाला यात्री था जो मूल रूप से ईरानी सम्राट का वैद्य था इसने अपनी यात्रा वृत्तांत में भारतीय समाज के संगठन, रीति–रिवाज, रहन–सहन इत्यादि का वर्णन किया है। प्लिनी–पहली शताब्दी में यह भारत आता और नेचुरल हिस्ट्री नामक पुस्तक लिखी इस पुस्तक में भारतीय पशुओं पेड़ों खनिजों आदि के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। यूनान से आने वाले तीनों यात्री निर्यकस, आनेसीक्रेट्स, अरिस्टोबुलस सिकंदर के साथ ही भारत आए थे।अन्य नामों में डायमेकस, डायोनिसियस, टॉलमी, निकोला मैनुकी, मार्कोपोलो और मनूची हैं। वहीं ब्रिटिश यात्रा साहित्यकारों में कैप्टन हॉकिंग्स विलियम हॉकिंस (ये दोनों यात्रा साहित्य यात्री मुगल बादशाह जहांगीर के शासनकाल में भारत आए और ईस्ट इंडिया कंपनी के लिए व्यापारिक सुविधा हेतु प्रयास किए थे), पीटर मांडी, सर टॉमसरो, है मिल्टन के नाम लिखे गए हैं।

समीक्ष्य पुस्तक का महत्व आज के संदर्भों में और अधिक है, क्योंकि यात्रा करने और उसका वृत्तांत लिखने के कई उद्देश्य हो सकते हैं जैसे व्यापार ज्ञान मनोरंजन विलास। आजकल ज्यादातर लोग अपने स्थिर जीवन की ओर से निकलने के लिए पर्यटन पर भी जाते हैं इसके अतिरिक्त इको टूरिज्म, एजुकेशनल टूरिज्म, एडवेंचर टूरिज्म, मेडिकल टूरिज्म जैसे स्वास्थ्य शिविर योग शिविर प्रचलन में हैं। यात्रा देखा जाए तो हमें बाहर से नहीं वरन भीतर से भी समृद्ध कर सकती है। मनोचिकित्सकों का मानना है कि यह एक अचूक दवा की तरह से काम करती है। वर्ष 2020 में एक हेल्थ जनरल में प्रकाशित एक अध्ययन के मुताबिक 62% यात्रियों ने माना है की नई जगह घूम करने के बाद उनका तनाव काफी कम हुआ है सूर्य की रोशनी ताजा हवा नए अनुभव नए तरह का खानपान और रहन–सहन हमारी सोच को सकारात्मक बना देती है बस यात्रा के दौरान चिंता और बेकार के दिखावे से दूर रहना है यात्रा दिमाग को रिचार्ज करने का अवसर देती है यात्रा हमारे रिश्तों को सुधारने और रिश्तों में मधुरता लाने का भी कार्य करती है, कमोबेश यात्रा साहित्य भी इन्हीं सभी विशेषताओं या गुणात्मकताओं को हमारे जीवन में समावेशित करने की क्षमता रखते हैं।यह पुस्तक कहीं न कहीं मशहूर शायर ख्वाज़ा मीर दर्द की ये पंक्तियां याद दिलाती हैं–

सैर कर दुनिया की गाफ़िल
ज़िंदगानी फिर कहाँ
ज़िंदगानी गर रही तो
नौजवानी फिर कहाँ.....

कुल मिला कर एक सारगर्भित सरस और सहज पुस्तक है जिसे सहज कर बुकशेल्फ में रखने वाले पाठक और संस्थान दोनों प्राप्त हो सकते हैं। •

पता : फ्लैट बी–1 मानसरोवर अपार्टमेंट प्लॉट नंबर 3,
सेक्टर 5, द्वारका, नई दिल्ली–110075
मो. : 7982620 596४98683 19498

प्रदीप श्रीवास्तव की कविता

तुम यहीं पर.....

गंगा तट,
उस पार रेखा सा झुंड वृक्षों का
जाड़े की सुबह के ऊपर
झुकी वह लट, धूप की
पानी के नंगे बदन पर,
झुका कुहरा
लहरों को पी जाना चाहता है
सामने दूर नभ में विचरती
पक्षियों का वह विशाल झुंड
मांझियों की हाल हिलोरें लेती,
नावें
जल से क्रीड़ा करते
सैलानियों का समूह
अभी उड़ कर गया कबूतर
मंदिर के कलश पर
वृक्षों का बसेरा
कहाँ उसका घर
उस दिन बैठी थी
तुम यहीं पर....

•

पता : 537 एफ/64 ए, इन्द्रपुरी कालोनी, आई.आई.एम.,
हरदोई रोड, निकट भिटौली तिराहा, लखनऊ–226013
मो. : 8707211135

भारत सरकार के रजिस्ट्रार आफ न्यूज पेपर्स की रजिस्ट्री संख्या 33122/78
भारतीय डाक विभाग की डाक पंजीयन संख्या–एल.डब्लू./एन.पी. 432/2006

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश

प्रमुख प्रकाशन

उत्तर प्रदेश मासिक	:	समकालीन साहित्य, संस्कृति, कला और विचार की मासिक पत्रिका समूल्य उपलब्ध एक अंक रु. 15/– मात्र, वार्षिक मूल्य रु. 180/– मात्र।
नया दौर (उर्दू)	:	सांस्कृतिक एवं साहित्यिक विषय की एक उर्दू मासिक पत्रिका, एक अंक रु. 15/– मात्र, वार्षिक मूल्य रु. 180/– मात्र।
वार्षिकी (हिन्दी/अंग्रेजी)	:	उत्तर प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों के विस्तृत आंकड़ों एवं सूचनाओं का वार्षिक विवरण मूल्य रु. 325/– मात्र।

महत्वपूर्ण प्रकाशनों के लिए सम्पर्क करें

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ.प्र.
दीनदयाल उपाध्याय सूचना परिसर, पार्क रोड, लखनऊ
उत्तर प्रदेश के समस्त जिला सूचना कार्यालय

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ.प्र. स्वत्वाधिकारी के लिए शिशिर, निदेशक, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ.प्र. लखनऊ द्वारा प्रकाशित तथा प्रकाश पैकेजर्स, लखनऊ में मुद्रित उ.प्र. संपादक – **दिनेश कुमार गुप्ता**